# दक्षिण भारत की यात्रा



सत्येन्द्र नारायण

| | | |
|---|---|---|
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |
| | | |

# दक्षिण भारत की यात्रा

लेखक—

सत्यैन्द्र नारायण

प्रकाशक

श्रीनाथ साह

शमाराम, दुर्गाकुण्ड, काशी

प्रथम संस्करण } १९३५ ई० { मूल्य ।-)

# स्मृति-चिह्न

# उत्सर्ग

बच्चा भैया,

रोज रोजका हाल आपको लिखते रहनेका वादा किया था। किन्तु मेरी यात्रा समाप्त होनेके पहले आप स्वयं ही अपनी लम्बी सफर करनेको चले गये। अतः इसे आपहीके अलभ्य चरणोंपर चढ़ाये देता हूं। आप जहां भो हों, इसे स्वीकार करेंगे, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

आपका प्यारा,
'चानू'

# निवेदन

पिछले साल एक दलके साथ दक्षिण भारतके भ्रमणका मौका मिला। एक आदरणीय सज्जनकी सलाहसे अपनी यात्रा का हाल "आज" में भेजता था। यह पुस्तक उन्हीं पत्रोंका संग्रह है। दिनभरके भ्रमणके बाद, ऊँघते हुए या जब और लोग स्नान भोजनादि कर रहे हों—चलती रेलमें, हिलते-डुलते लिखना पड़ा। भ्रमणकी किताबोंका साहित्यमें महत्त्वपूर्ण स्थान है। किन्तु प्रस्तुत पुस्तक उस श्रेणीसे कोसों दूर है। इसमें तो कुछ बीतते हुए क्षणों, कुछ उठते हुए विचारों और कुछ छूटते हुए स्थानोंका रेखाचित्र मात्र है।

अंतमें कहना यह है कि श्री श्रीनाथ शाहजी ( दुर्गाकुण्ड, काशी ), श्री बलदेवदासजी ( "आज", काशी ) और अपने नगरके श्री 'द्विज' जीकी कृपा और प्रोत्साहनके बिना यह पुस्तक आपके सामने न आ पाती। किन्तु इसके लिए उन्हें धन्यवाद देकर मैं उनके स्नेहका मूल्य नहीं आंका चाहता।

नयाबाजार<br>भागलपुर सिटी<br>१९. ५. ३५.

विनीत<br>**लेखक**

# दक्षिण भारतकी यात्रा

## हम चल पड़े

रामने श्यामसे कहा और श्यामने यदुसे, इस तरह बात फैल गयी कि कुछ मनमौजी दक्षिणकी यात्रामें जाना चाहते हैं। मैंने सोचा, चलो साथ हो लो, क्योंकि तरद्दुद तो सब संयोजकके सिर होगी और देशदर्शनका आनन्द मजेमें अपने रामको मिलेगा। संयोजकजीसे पूछनेपर पता चला कि उन्होंने जी० आई० पी० रेलवेकी एक यात्री-गाड़ी ( टूरिस्ट कार ) ले रखी है, इसमें ३८ आदमियोंके लिये जगह है; और किराया है ३८ थर्ड क्लास टिकट, या ।||) फी मील, जो अधिक हो। इसके अतिरिक्त ५) रोज भाड़ा भी देना पड़ता है, चाहे गाड़ी चले या खड़ी रहे। हम लोगोंको काशीसे चलना था, अतः हम लोगोंने काशीमें ही गाड़ी मांगी। पर जी० आई० पी० के अधिकारियोंने कहा कि यात्रा तो जी० आई० पी० की ही लाइनसे शुरू होगी, फिर चाहे आप गाड़ी जिस लाइनपर भी ले जायँ। अतः हम काशीसे शनिवार, ८-१२-३४ के दिनके तीन बजेकी गाड़ीसे इलाहाबादके लिए रवाना हुए। सपरिवार श्री श्रीनिवासजी, श्री चन्द्रभालजी, श्री श्रीनाथजी और श्री बलदेवदासजी और दो मित्र यही हमारा दल था। नौकर, दाई इसके अलावा थे। स्टेशनपर मित्रोंसे विदा होनेका दृश्य बहुत ही कारुणिक था। सभी आये हुए थे। इनमें श्री श्रीप्रकाशजी, श्री

श्रीनन्दनजी, और श्री चन्द्रचूड़ देव (उलाव) के नाम तो उल्लेख्य हैं ही, पर सबसे अधिक स्मरणीय नाम है बाबू शिवप्रसादजी गुप्तका जो बीमार रहते हुए भी हमें विदा करनेको स्टेशन पहुँचे थे। शामको हम इलाहाबाद पहुँचे। वहां गाड़ी बदलनेमें रेल-वालोंने बड़ी मदद की। समाचार पाकर वहां प्रोफेसर श्रीरञ्जन और श्री सीतारामजी शाह भी पहुँच गये थे। वे खानेका सामान साथ लाये थे। अतः हम सबने यात्री-गाड़ीमें बैठ जानेके बाद खाना खाया। हमारी गाड़ी ९। बजे रातको चली और सबेरे जबलपुर पहुँची।

## जबलपुरमें

खास दर्शनीय स्थान हैं,—मदन-महल, भेड़ाघाट तथा धुआंधार झरना। भेड़ाघाट स्टेशनसे १३ मीलपर है। ४॥ मील जानेके पश्चात् बायें हाथ घूमकर मदन-महलको सड़क जाती है और सीधी सड़क भेड़ाघाटको। धुआंधार भेड़ाघाटसे मील भरपर है। मदन-महल गोंडोंकी रानी दुर्गावतीका किला है और बहुत ही सुन्दर तथा मजबूत बना हुआ है। एक समय था जब यहां गोंड़ोंका शक्तिशाली राज्य था पर अब तो उसकी कहानी भर रह गयी है।

हम लोग देर करके चले थे और फिर लौट कर ट्रेन भी पकड़नी थी। अतः निश्चय हुआ कि मदन-महलका परिदर्शन स्थगित रखा जाय किंतु बादको पछतावा ही हुआ कि उसे भी क्यों न देख लिया। खैर, एक लॉरी ठीक की गयी। उसने ८) लिये।

भेड़ाघाट एक छोटासा पक्का घाट है जहांसे 'मारबल राक्स' देखनेके लिए नाव जाती है। स्नान करनेके लिए सबसे सुभीते की जगह यही है। यहांपर सिर्फ दो नावें जिला-बोर्डकी ओरसे

है। एक १० आदमियोंके बैठने लायक है, दूसरी १२ आदमियोंके बैठने लायक। हर एकपर ६–७ खेनेवाले रहते हैं। बड़ी नावका भाड़ा २॥=) और छोटीका २॥=) ४५ मिनटका लगता है। अगर वेशी समयके लिए लीजिए तो फिर २) फी घंटा लगता है। भेड़ाघाटपर पहले 'मारबल राक्स' देखकर फिर स्नान करना अच्छा रहता है क्योंकि बात यह है कि नाव घड़ी-घंटा देख कर मिलती है। अतः जब निश्चिन्त हो ले तभी नाव ठीक करे।

## भेड़ा घाट

भेड़ाघाटसे नाव छूटते ही दोनों ओर सफेद, हलके नीले और हलके गुलाबी रङ्गकी संगमर्मरकी चट्टानें मिलती हैं। दोनों ओर ऊँची ऊँची सफेद चट्टानें और बीचमें नर्मदाकी नीली गहरी धारा—ऐसी है यहाँ प्रकृति देवीकी झाँकी। कहते हैं, वहाँ २५० फुटसे भी अधिक गहराई है। कहीं कहीं चट्टान काईसे काली हो गई है पर फिर भी सफेदी झलक मारती ही है। कहीं कहीं तो चट्टानें इतनी सफेद हैं कि सफेद दाढ़ी भी मात है। वर्षा और उमड़ी हुई नर्मदाके पानीने चट्टानोंको सर्वत्र काट डाला है। स्थान स्थानपर गोलमटोल विचित्र विचित्र आकृतियाँ भी बन गयी हैं। 'हाथी तथा घोड़ेके पाँव', 'कालभैरव' और 'गणेश' हमें दिखाये गये। आगे चलकर यह धारा समाप्त हो जाती है और एक पहाड़ी झरना गिरता हुआ दिखाई देता है। वहींसे हम लौटे। हमें आने जानेमें करीब ३५ मिनट लगे। इस तरह १० मिनट फिर भी बच गये।

चट्टानोंमें स्थान स्थानपर अबाबीलोंने घोंसले बना रखे हैं। इस पहाड़ी स्थानमें मिट्टीके घोंसले भी प्रकृतिकी अजूबातमें हैं।

यहाँसे अब हम गौरीशंकरका मन्दिर देखने भेड़ाघाटके

ऊपर स्थित पहाड़ीपर चले। यहाँ जानेके लिये १०८ सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ीं। यहाँ ६४ योगिनियोंकी कद्देआदम मूर्तियाँ हैं जो ११ वीं १२ वीं शताव्दीकी मालूम पड़ीं। ये कलाके अत्यन्त उत्कृष्ट उदाहरण हैं। 'कंकाली' की मूर्तिमें कंकालोंकी तसवीर वड़ी ही सुन्दर वन पड़ी है। ये मूर्तियाँ एक गोल दीवारके चारों ओर हैं। वीचमें गौरीशंकरका मन्दिर है जिसमें काले पत्थरकी गौरी तथा शंकरकी मूर्ति वहुत ही सुन्दर है। ये मूर्तियाँ सवको अवश्य देखनी चाहिए।

## धुआँधार झरना

गौरीशंकरके दर्शन कर हमलोग पहाड़ीकी दूसरी ओर नीचे उतरे और फिर पैदल ही चलकर धुआँधारके झरनेपर पहुँचे। यहाँ नर्मदा नदी नीचे एक खड्डेमें वड़ी तेजी और आवाजके साथ गिरती है। इतनी ऊँचाईसे गिरनेके कारण पानी फिर फुहारेकी तरह ऊँचा उठता है और फिर छोटे कणोंमें चारों ओर दूर तक हवामें फैल जाता है जिससे धुएँकी तरह मालूम होता है। हमलोग चट्टानोंपर चलते हुए उस खड्डेके विलकुल किनारे तक चले गये थे। पानीकी वूँदोंके छीटें हमें वड़े ही भले मालूम होते थे, खासकर उस कड़ी धूपकी यात्राके वाद। वहाँसे हमलोग फिर भेड़ाघाट लौटे। हमारी लॉरीके दूरदर्शी ड्राइवरने तेल इतना ही लिया था जितना भेड़ाघाट पहुँचनेको काफी हो। उसने अपने सहकारीको तेलके लिए भेजा था। समय इतना ही था कि हमलोग अगर तुरत चलें तो गाड़ी मिल सकती थी अन्यथा सारा प्रोग्राम उलट पुलट हो जानेकी आशंका थी। अतः हमलोग उस देवदूतके आगमनकी प्रतीक्षा वड़ी उत्सुकतासे करने लगे।

## अजन्ताकी गुफाएँ

हम ट्रेन पानेसे निराश हुआ ही चाहते थे कि पेट्रोल लेकर वह आदमी आ गया और राम राम कर हमारी लॉरी चली। देर ही जानेके सववसे हम शहर नहीं देख सके और शामकी ट्रेनसे जलगाँवके लिए रवाना हुए।

अजन्ता जानेके लिए कई एक रास्ते हैं, हमलोगोंने जलगाँव होकर जानेका निश्चय किया। जलगाँव एक अच्छा वड़ा शहर है। विजली और पानी-कल दोनों ही यहाँ मौजूद हैं। यहाँसे अजन्ता ३८ मील है। एक लॉरी जिसमें १९ आदमियोंकी जगह थी २०) में आने जानेके लिए ठीक की गयी। खूव सुवह उठकर, चाय-पानी करनेके वाद, हमलोग अजन्ताके लिए रवाना हुए।

सातवीं सदीमें वौद्ध धर्मका विलकुल ह्रास हो चुका था और धीरे धीरे लोग उसके मठों और मन्दिरोंको भूलने लग गये थे। अजन्ताकी अद्भुत गुफाओंकी भी यही दशा हुई। १८१९ में अंग्रेजी फौजकी एक टुकड़ी इन पहाड़ी देशोंमें घूम रही थी, और सर्वप्रथम उसीके द्वारा सभ्य संसारको इन गुफाओंका पता लगा। फिर एशियाटिक सोसाइटीके कहने-सुननेपर ईस्ट इण्डिया कम्पनीने मद्रास सेनाके मेजर रावर्ट गिलको १८४४ ई० में यहाँकी दीवारोंपर वनी तसवीरों ('फ्रेस-कों') की नकल करनेके लिए नियुक्त किया। विद्रोहके वाद भी मेजर साहव तसवीरोंकी नकल करते रहे और उन्हें विलायत भेजते रहे। किन्तु १८६६ में पाँच तसवीरोंके अलावा सभी एक प्रदर्शनीमें जल गयीं। वे पाँचों अभी तक बची हैं। उसके वाद वम्वई आर्ट स्कूलके प्रिंसिपल श्री जॉर्ज ग्रिफिथ्सने अपने विद्यार्थियोंकी मददसे १२५ तसवीरोंकी नकल की और उन्हें

विलायत भेजा। पर दैवदुर्विपाकसे एक अग्निकांडमें उनमेंसे ८७ जल गयीं। उन्हीं बची हुई तसवीरोंसे श्री ग्रिफिथ्सने अजन्ता पर अपनी विद्वत्तापूर्ण पुस्तक लिखी। ये गुफाएँ निजामके राज्यमें हैं। किंतु १९१४ तक निजामकी सरकार इस ओरसे बिलकुल उदासीन-सी थी। १९१४ में एक पुरातत्त्व विभाग खोला गया और तबसे इस ओर बहुत कुछ काम हुआ है। तसवीरोंकी रक्षाका प्रबन्ध हो गया है और सड़कें, बंगले वगैरह बनवाये गये हैं जिससे वहां जाने और देखने वगैरहका सुभीता हो गया है।

निजामके पुरातत्त्व विभागकी ओरसे कई किताबें, दामी और सस्ती, इस विषयपर निकली हैं और उनसे देखनेमें बहुत मदद मिलती है। तसवीरोंके पोस्टकार्ड भी वहां बिकते हैं।

एक अर्ध गोलाकार पहाड़ीके मध्य भागकी चट्टानोंको काट काटकर ये गुफाएं बनायी गयी हैं। २९ गुफाओंमेंसे दो अगम्य हैं बाकी सभी देखी जा सकती हैं। बहुतसी छोटी हैं और कुछ बड़ी। किसी किसीमें चैत्य स्थापित हैं जिनपर बुद्धकी मूर्ति बनी है। बहुतसी खाली हैं जो भिक्षुओंके रहनेके काममें आती थीं। दीवारोंपर किसी चीजका प्लास्टर चढ़ा कर तसवीरें बनायी गयी हैं। एक ही पत्थरको खोद खोदकर उसके अन्दर कमरे और मूर्तियां वगैरह बनायी गयी हैं। इन गुफाओंको देखनेसे पता चलता है कि बौद्धोंके समयमें भारतने कलामें कितनी उन्नति की थी। २००० वर्ष बीत जानेपर भी अभीतक उन तसवीरोंका बना रहना इस बातका प्रमाण है कि वे कलामें वर्तमान भारतसे बहुत ऊँचे चढ़ चुके थे। अजन्ताके विषयमें अधिक जाननेके लिए "गाइड टू अजेण्टा फ्रेस्काज" ( दाम ३) रुपया )—जिसे निजामके पुरातत्त्व विभागने प्रकाशित किया है—देखना चाहिए।

अनेक पहाड़ी नदियां लांघते हुए हम लोग ११॥ वजे अजन्ता पहुँचे। पहाड़ीके नीचे एक वड़ा सुन्दर झरना वहता है। हम लोगोंने वहीं स्नान किया और भोजन वनवानेका इन्तजाम कर गुफाएँ देखने ऊपर गये। वे गुफाएँ शुक्रवारको वन्द रहती हैं, और शनिवारको १ वजे वन्द हो जाती हैं। वाकी सभी दिनोंमें ९ वजेसे ४ वजेतक खुली रहती हैं। चार गुफाओंमें जिनमें तसवीरें अधिकतासे हैं वहाँ विजलीकी वत्तीका प्रवन्ध है और ५) देनेपर १॥ घंटेतक मिलती है। पर उस दिन उसकी कल ही विगड़ गयी थी, अतः हमें सिर्फ टार्चोंकी मदद-पर ही निर्भर रहना पड़ा। इन तसवीरोंमें वुद्धदेवके भिन्न भिन्न जन्मोंकी कथा वड़ी खूवीसे दिखायी गयी है। दीवालोंपर खुदी हुई मूर्तियां तथा अन्याय आकृतियां वड़ी ही सुन्दर हैं। वार वार देखने और सराहनेपर भी जी नहीं भरता।

अजन्ताका परिदर्शन कर ४॥ वजे हमने वहीं झरनेके किनारे भोजन किया और शामको जलगांव लौटे। फिर ९॥ वजे वहांसे चलकर १॥ वजे रातको मनमाड़ पहुँचे और फिर निजाम स्टेट रेलवेकी ट्रेनसे ६ वजे औरंगावाद पहुँचे।

## एलोराकी गुफाएँ

यहांसे एलोराकी गुफाएँ १३ मील हैं। एक लॉरी जिसमें २९ आदमियोंकी जगह थी २३) में आने जानेके लिए ठीक की गयी। हम लोग पहले घुश्मेश्वरनाथ गये। यह शिवके द्वादश ज्योति-लिंगोंमेंसे एक है। यह एलोरासे कोसभर आगे हैं। यहींपर शिवालय नामक तालाव भी है जो तीर्थ समझा जाता है। इस मन्दिरका जीर्णोद्धार रानी अहल्यावाईकी सासने किया था। लाल पत्थरके वने हुए इस मन्दिरमें नक्काशीका काम वड़ा सुन्दर हुआ है।

इसे देखनेके बाद हम एलोरा देखने लौटे। मूर्तिकलाकी दृष्टिसे ये गुफाएँ अजन्तासे कहीं ऊँचे दर्जेकी हैं। अजन्तामें सिर्फ बौद्धोंकी गुफाएँ हैं किन्तु एलोरामें बौद्ध, हिन्दू तथा जैन गुफाएँ भी हैं। बहुत हाल तक—चालीस वर्ष पहले तक—यहाँकी हिन्दू गुफाओंके मन्दिरोंमें बाकायदे पूजा होती थी और पुजारी महन्त वगैरह रहते थे। पर, अब तो यह पूर्णतः पुरातत्त्वविभागके अधिकारमें है। यहाँ भी जगह जगह मरम्मत वगैरह करायी गयी है। ये गुफाएँ पहाड़की ढालुई तराईमें बनायी गयी हैं। ये चट्टानोंको भीतर और बाहर दोनों ओरसे काट कर बनायी गयी हैं। इस तरह ये गुफाएँ पूरी तरह मन्दिरोंकी शकलमें हैं। हिन्दू गुफाओंमें तमाम शिवलिंग स्थापित हैं। शिवकी लीलाओंकी मूर्तियाँ दीवारों पर खुदी हुई हैं। ताण्डव नृत्य, शिव-विवाह वगैरहकी मूर्तियाँ बहुत ही कलापूर्ण हैं। प्रसिद्ध नर्तक उदयशंकरने अपनी अभिनव नृत्य-कलाका निर्माण इन्हीं मूर्तियोंके आधार पर किया है। यहाँकी गुफाएँ अजन्ताकी गुफाओंसे बड़ी और बहुसंख्यक हैं और दूरतक फैली हुई हैं। कैलास नामक गुफामें बीचमें मन्दिर है और चारों ओर रहनेको बड़ी बड़ी गुफाएँ जिसमें हरएकमें शिवलिंग स्थापित हैं। दो ऊँचे ऊँचे स्तम्भ और जीवत्प्रमाण दो हाथियोंकी मूर्तियाँ भी हैं। इन गुफाओंकी तसवीरोंपर प्लास्टर चढ़ाकर फिरसे तसवीरें बनाई गई थीं। बौद्ध गुफाएँ अजन्ता हीकी तरह हैं और जैन गुफाएँ भी बौद्ध गुफाओंसे मिलती जुलती सी हैं। गुफाएँ साधारणतः बड़े बड़े आयतकार 'हॉल' हैं, जिनमें दो कतार खम्भोंके हैं और सामनेकी कोठरीमें एक मूर्ति स्थापित है। यहाँ बहुत सी गुफाएँ दो मंजिली और कुछ तिमंजिली भी हैं। इन गुफाओंको देखते हुए हमें बहुत

देर हो गयी। इससे हम लौटनेके समय दौलतावादका सुप्रसिद्ध किला नहीं देख सके। यह वही किला है जहाँ मुहम्मद तुगलक अपनी राजधानी दिल्लीसे हटाकर ले गया था। यह एक पहाड़ी पर बहुत ही मजबूत बना हुआ है। यह किला अवश्य ही देखना चाहिए।

एलोरा और दौलतावादके बीच खुलदावाद नामक कस्वेमें औरंगजेब और आसफजाह ( प्रथम निजाम ) की कब्रें हैं। औरंगजेबकी इच्छाके अनुसार उसकी कब्रपर कोई छत नहीं बनी है और सिर्फ एक बनतुलसीका पौधा लगा है। कब्र देखकर बरबस मुँहसे निकल पड़ता है—

'बड़े बड़े हैं पड़े आज इस जमींके तले।'

औरंगाबाद लौटने पर शाम हो गयी थी। इससे हम औरंगजेबकी बेगमकी कब्र—जो ताजकी नकल कही जाती है—नहीं देख सके। देखनेवालोंने लिखा है कि यह कलाका एक उत्कृष्ट उदाहरण है। रातकी गाड़ीसे मनमाड़ लौट गये।

## अहमदनगर

औरङ्गाबादसे हमें पण्ढरपुर जाना था। इसके लिए धोंड़ जंकशनमें गाड़ी बदलनी होती थी और कुछ घण्टे बैठना पड़ता था। अतः हमने निश्चय किया कि एकके बजाय दो जगह बदल कर अहमदनगर भी देख लें। इस निश्चयके अनुसार मनमाड़-से ५ बजे चलकर ९ बजे हम अहमदनगर पहुँचे। स्टेशनपर ही एक मित्र हमें लेने आये थे, पर हमने अपनी गाड़ी हीमें रहना ठीक समझा। करीब दो बजे हम सब एक लारीपर शहर देखने निकले। किलेमें सरकारी फौजें और उनकी दफ़्रें हैं,

इसलिए उसे हम नहीं देख सके। इसी किलेकी टूटी हुई दीवार के एक हिस्सेको सुप्रसिद्ध चाँद बीबीने रातोरात मरम्मत कराया था। औरङ्गजेब यहीं मरा था। उसे शहरके बाहर एक स्थानपर अन्तिम स्नान कराया गया था और उसकी अँतड़ियाँ यहीं गड़ी हैं। बाकी शरीर औरङ्गाबादमें गड़ा है। यहाँ भी उसकी कब्र बिलकुल सादी है।

फिर हम एक पहाड़ीपर उस इमारतको देखने गये जो साधारणतः चाँदबीबीके रौजेके नामसे मशहूर है। यह इमारत पत्थरकी गोल बनी हुई है। केवल तीन महलें हैं। शायद सात महलें बनवानेका विचार था। इस इमारतके नीचे सलाबतखाँ की कब्र है। इन इमारतोंको देखनेके बाद हम कुर्दवाडीके लिए रवाना हो गये। वहाँ रातभर अपनी गाड़ीमें सोए। फिर सवेरे बारसी लाइट रेलवेकी ट्रेनसे पण्ढरपुर आये।

## पण्ढरपुर

यहाँ विठोबा या विट्ठलनाथ ( विष्णु ) का मन्दिर है। 'विष्णु' से 'बिट्ठू' और उससे 'विट्ठल' शब्दकी उत्पत्ति हुई मालूम होती है। यह मन्दिर दक्षिणमें बहुत ही प्रसिद्ध है और सिर्फ 'यात्री-कर' से म्युनिसिपलिटीको ९०, हजार सालानाकी आमदनी है। नगर चन्द्रभागा नदीके किनारे बसा है। यह नदी गहरी तो नहीं है, पर धारा बहुत ही तेज है। शहर बहुत ही साफ है। गलियाँ भी बहुत ही साफ हैं।

पण्ढरपुरमें श्री विठोबाका दर्शन कर गुरुवार १३ दिसम्बर को ही हम कुर्दवाडी लौट आये जहाँ हमारी यात्री-गाड़ी खड़ी थी और दो घण्टे बाद हम दूसरी ट्रेनसे रेनिगुण्टाके लिए रवाना हो गये। सारी रात चलकर दूसरे दिन ढाई बजे हम रेनिगुंटा

जंकशनपर पहुँचे। रेनिगुण्टा मद्रास साउथ मरट्ठा रेलवेका बड़ा जंकशन है। खास शहरमें कोई दर्शनीय स्थान नहीं है। पर पास ही दो बड़े-बड़े तीर्थ स्थान हैं जहाँ रोज सैकड़ों यात्री दर्शन पूजनके लिए जमा होते हैं।

## वेंकटेश्वरका मन्दिर

पहला तीर्थ 'वेंकटेश्वर' का मन्दिर है जो हमलोगोंकी तरफ 'बालाजी' के नामसे मशहूर है। यह मन्दिर तिरुमलय पर्वतपर तिरुमलय गाँवमें है। रेनिगुण्टासे छः मीलपर तिरुपति स्टेशन है। वहाँ छोटी लाइन जाती है। तिरुपति स्टेशनसे सटा हुआ "देवस्थान फ्री चोलट्री" नामक बड़ी धर्मशाला है। यह मन्दिरकी ओरसे है और बहुत ही आरामदेह और साफ है। यहाँ यात्रियोंको हर तरहकी सुविधा मिलती है। यहाँके अधिकारी कुली, डोली वगैरह भी बहुत वाजिब दामपर ठीक कर देते हैं। तिरुपतिसे तिरुमलय पहाड़ करीब दो मील है। वहाँ तक जानेके लिए बैलगाड़ी तथा घोड़ा गाड़ी मिलती है। बैलगाड़ियाँ अपनी ओरकी बैलगाड़ियोंसे बहुत अच्छी हैं। उनपर गोल छप्पर लगा रहता है, बैल तेज दौड़नेवाले होते हैं, और गाड़ीमें तीन चार आदमी तक आरामसे बैठ सकते हैं। घोड़ागाड़ी भी बैलगाड़ीकी ही तरह होती है और तेजीमें भी बैलगाड़ीसे कोई खास फर्क नहीं होता।

पहाड़की जड़से मन्दिर तक सात मीलका फासला है। यह रास्ता छः पहाड़ियोंको पार करता हुआ जाता है। ये सातो मील सीढ़ियाँ बनी हैं और बिजलीकी तेज रोशनी लगी है। इन पहाड़ियोंपर जूता पहना सख्त मना है। अतः सारा रास्ता खाली पैरों ही तय करना पड़ता है। जो पैदल नहीं

जा सकते उनके लिए डोलियाँ मिलती हैं।* आने जाने तकके लिए तीन चार रुपए तकमें डोलियाँ मिल जाती हैं, पर ये डोलीवाले बड़ी हुज्जत करते हैं। गाड़ीवाले भी कुछ कम हुज्जती नहीं होते। सारे रास्ते डोलीवाले डोलीपर बैठने-वालेको 'इनाम' 'इनाम' कर परेशान किया करते हैं।

हम लोग तीसरे पहर तिरुपति पहुँचे, किन्तु गाड़ीवालोंकी हुज्जतके मारे नाकोंदम हो गया। ईश्वरकी दयासे इस प्रांतकी बोली भी कानोंको सुखद नहीं है और फिर ये सभी बहुत जोरोंसे चिल्लाकर बोलते थे। इससे तबीयत घबरा उठी। अन्तमें हम लोगोंने पैदल ही चलना निश्चय किया और पहाड़ पर चलने लगे। ज्योंही जरा अन्धेरा हुआ, बिजलीकी बत्तियोंने सारे रास्तेको आलोकित कर दिया, मानो पहाड़ने बिजलीकी माला पहन ली। रास्ता एक पहाड़ीकी चोटी पर पहुँचकर फिर नीचे जाता था। इस तरह एकके बाद एक छः पहाड़ियाँ हम लोगोंने पार कीं। थोड़ी थोड़ी दूर पर रास्ते पर छत बनी है जहाँ धूप या पानीसे यात्री रक्षा पा सकता है।

तीन थाने भी रास्तेमें हैं। जगह जगह चाय वगैरहकी बहुत सी दूकानें हैं। सारे रास्ते भिखमंगोंकी वह भीड़ बैठी

---

* प्रसन्नताका विषय है कि बालाजी ( तिरुपति ) के मन्दिरतक जानेके लिए पहाड़ी रेल बनानेके वास्ते मन्दिरके अधिकारियोंने रुपए मंजूर किये हैं। इसके लिए उन्हें जनसाधारण और म्युनिसिपलिटीके विरोधका भी सामना करना पड़ा। इनका कहना था कि मन्दिरकी दुर्गमता ही उसकी पवित्रता है। किन्तु इस रेलमें केवल उच्चवर्णके हिन्दू ही बैठ सकेंगे। जो लोग पैदल जाना चाहेंगे उनके लिये वर्तमान रास्ता भी बराबर मरम्मतमें रखा जायगा।

'स्टेट्समैन' २५-२-३५

रहती है कि अगर सौ रुपयोंके पैसे बाँटे जायँ तो भी हरएकको एक एक पैसा नहीं मिले। इन्हें देखकर मालूम होता है जैसे सारा देश ही अपाहिज, कोढ़ी और 'सन्यासी' हो। फिर भी; इतनी वाधाओंके होते हुए भी यह पहाड़ी यात्रा बड़ी आनन्ददायक रही। अगर पैरोंमें शक्ति हो, नंगे पैर पहाड़ पर चल सकते हों और मनोनुकूल संगी हों तो हर एक आदमीको यह यात्रा करनी चाहिए, सिर्फ यात्राके आनन्दके ख्यालसे भी। सात मील तक सीढ़ियोंका रास्ता शायद हिन्दुस्तानमें और कहीं भी नहीं है। राम राम करके हम लोग ११॥ बजे रातमें तिरुमलय गाँवमें पहुँचे और श्री सीताराम बाबाजीके मठमें ठहरे।

श्री वेंकटेश्वर जीके कई दर्शन होते हैं जिनमें रुपये देने पर यात्री जाने पाते हैं। पर दिनमें तीन दर्शन, सवेरे, दोपहर, और शामको, सभीको मुफ्त मिलते हैं। यहाँ विष्णुकी मूर्ति है और बड़ी अच्छी है। आकाश गंगा नामक झरना यहाँसे चार मील पर है किन्तु अत्यन्त थक जानेके कारण हम लोग वहाँ नहीं गये। मन्दिरमें भातका भोग लगता है और जगन्नाथपुरीकी तरह सभी विना भेदभावके प्रसाद पाते हैं। ३०) देने पर खास तौर पर भी भोग लगता है। इस प्रांतमें सभी जगह लोग बड़े साफ दिखाई पड़े और रास्तेके घर भी बहुत साफ थे किन्तु तिरुमलयमें पाखानेका कोई प्रबन्ध नहीं है। थोड़ी ही दूरपर एक जंगल है, उसीमें सभी निबटने जाते हैं। बमपुलिस भी एक है।

देखभाल कर तीसरे पहर हम लोग वापस हुए। जानेके समय अन्धेरा हो गया था, इससे राहमें प्रकृतिकी शोभा हम लोग नहीं देख सके थे। किन्तु तीसरे पहरकी धूपमें सारी प्रकृति मानो खिल उठी थी। पहाड़ पर नीचे ऊपर चारों ओर

जंगल और बीचमें रास्ता जो कहीं ऊपर और कहीं नीचे हो जाता था, बड़ाही सुन्दर मालूम होता था। सामने ऊँची खड़ी पहाड़ियां जो जगह जगह बिलकुल सीधी वृक्षविहीन खड़ी थीं, और भी शोभा दे रही थीं। लौटते समय हम लोग बड़ी तेजीसे लौटे और शाम होते होते नीचे पहुँच गये। तिरुपतिमें रामजी और गोविन्दजीके मंदिर हैं। वहां भी दर्शन करते हुए हम लोग ११ वजे रातकी गाड़ीसे रेनिगुण्टा लौट गये।

## कालहस्तीश्वर

दूसरा तीर्थ कालहस्तीश्वरका है। यह रेनिगुण्टासे १८ मील है और यहां भी रेल जाती है, किन्तु हम लोगोंने यहां लॉरीसे जाना ठीक किया। सवेरे एक लॉरीपर हम कालहस्ती गये। रास्ते भर धानके खेत दिखाई दिये जिनमें ठेहुनाभर पानी भरा था। पहाड़ोंमें बांध वांधकर यहां बड़ी भारी झील बनायी गयी है और उसीसे पानी लेते हैं। इस तरह ये लोग वर्षापर जरा भी निर्भर नहीं रहते। ये खेतोंमें पेड़ोंके पत्तेको खादके लिए सड़ाते हैं।

कालहस्तीश्वर महादेवके वायुलिंगका मन्दिर है। यहां यात्री मूर्तिके पास नहीं जा पाते। कुछ दूर हीसे दर्शन करना होता है। मन्दिर बहुत ही बड़ा है। यहां दर्शन कर हम फिर तीसरे पहर लौट आये और शामकी गाड़ीसे तिरुत्तनी पहुँचे जो रेनिगुण्टासे सिर्फ २३ मील है। तिरुत्तनीमें स्टेशनसे मीलभर पर एक छोटी पहाड़ीपर श्री कार्तिकेय स्वामीका मन्दिर है जिसे स्थानीय लोग सुब्राह्मण्यम् स्वामीके नामसे पुकारते हैं। मंदिर तक जानेके लिए करीब ३७५ सीढ़ियां हैं। यहां भी लोग मूर्तिका स्पर्श नहीं कर पाते। किंतु दर्शन बहुत अच्छी तरह

हो जाता है। मयूरपर सवार कार्तिककी काले पत्थरकी मूर्ति बड़ी सुन्दर बनी है। दर्शनादि करके हम फिर अपने चलते फिरते घर-जी० आई० पी० रेलकी यात्रीगाड़ीपर लौट आये।

## पाण्डिचेरी

फ्रेंच एक जमाने तक हिन्दुस्तानके राजा रह चुके हैं। इससे हमने आशा की थी कि पांडिचेरी अगर कलकत्ता या बम्बई जैसी न होगी तो कमसे कम लखनऊ जैसी तो होगी ही। पर देखा यह नगरी फ्रेंचोंके उजड़े हुए वैभवकी यादगार भर है— उसका वैभव एक विधवाका वैभव है, जो पुकार पुकार कर कह रहा है—

'जो गुजर गया वह बहार हूँ;
जो उजड़ गया वह मजार हूँ'

तिरुत्तनीसे तीसरे पहर चलकर हम उसी दिन शामको आरकोनम पहुँचे। यहाँ हम जी० आई० पी० की यात्री-गाड़ीसे एस० आई० रेलवेकी यात्री-गाड़ीमें चले गये क्योंकि इधर छोटी लाइनकी गाड़ियाँ चलती हैं। इस यात्रीगाड़ीमें एक रसोईघर, एक खानेका कमरा चार सोनेके कमरे ( हर एकमें चार बेंचें ), दो पाखाने और आठ बेंचें रास्तेके इधर उधर हैं। सब मिला-कर २४ आदमियोंके सोनेकी जगह है।

आरकोनमसे शामको चलकर हम आधी रातको विल्लू-पुरम पहुँचे। यहाँसे एक लाइन तिरुवन्नमलय, जहाँ महादेवके अग्निलिंगका दर्शन है, जाती है और दूसरी पांडिचेरीको जाती है। हमारे दलके अधिकांश यात्री यात्रीगाड़ीपर तिरुवन्नमलय-के लिए चले गये पर थोड़े लोग पांडिचेरी देखनेके लिए अधिक उत्सुक थे। अतः यह दल, जिसमें मैं भी शामिल था, विल्लू-

पुरम् ठहर गया यहाँसे सवेरे छ बजे चलकर आठ बजे पांडि-
चेरी पहुँचे। पांडिचेरीके दो स्टेशन पहले चिन्नाबाबू समुद्रम्से
फ्रेंचोंका राज्य है। अतः यहीं अंगरेजी सरकारकी ओरसे
चुंगीकी जाँच होती है। पहले और दूसरे दर्जेके यात्रियोंके
सामान तो रेलपर ही देख जाते हैं पर तीसरे दर्जेवालोंको एक
टीनके छप्परके नीचे जाकर अपना सामान दिखाना होता है।
यहाँ अपनी घड़ीका नम्बर नोट करा देना चाहिए, नहीं तो
लौटते वक्त उसपर चुंगी लग सकती है। पांडिचेरीमें किसी
किसकी चुंगी न होनेके कारण घड़ी, जापानी रेशम, साबुन
वगैरह विदेशी चीजें बड़ी सस्ती मिलती हैं। इस सस्तेपनपर
मोहित होकर यात्री अक्सर ढेरों चीजें ले आते हैं। किन्तु
अंग्रेजी सीमामें फिर प्रवेश करते ही चुंगी लग जाती है।
परेशानी होती है घलुएमें। पांडिचेरीमें रेलसे उतरते ही एक
पुलिसमैनने एक छपा हुआ कागज तथा एक बड़ा-सा रजिस्टर
मेरे सामने कर दिया। हमें बताया गया कि हमारे खद्दरके
कपड़े देखकर उन्हें हमपर शक है और इसीसे हमें नाम, धाम,
काम वगैरह लिखना पड़ेगा। खैर, इनसे भी छुटकारा पाकर
हम आगे बढ़े।

हिन्दुस्तानमें पैर धरनेके ७१ वर्ष बाद फ्रांसीसियोंने पांडि-
चेरी बीजापुरके राजासे खरीदा। तबसे अबतक यह छः बार
उनके हाथोंसे लिया गया और फिर उन्हें दिया गया। शायद
इसी कारण यह शहर तनिक भी बढ़ नहीं सका है। इसका
रकबा ११५ वर्गमील तथा आबादी करीब ३ लाख है।

शहर एक नहर द्वारा दो हिस्सोंमें बँटा है—'काला' और
'गोरा'। समुद्रके किनारे बसे हुए मुहल्ले 'गोरा शहर' कहाते हैं।
यह अपेक्षाकृत साफ है और हवाकी अठखेलियाँ बड़ी भली

लगती हैं। किन्तु शहरमें सफाईका ध्यान बिलकुल नहीं रखा जाता। नहरका पानी बिलकुल सड़ गया है और बहुत तेज महकता है। "काला शहर" में सड़कके दोनों ओर उथली नालियाँ बनी हैं जिनका कीचड़ सारे सड़कको गन्दा करता रहता है। सड़कें सभी सीधी हैं और एक दूसरेको समकोणपर काटती हैं। शराबपर कोई भी रोक टोक न होनेके कारण; उसकी दूकानोंकी भरमार है।

यहाँके दर्शनीय स्थानोंमें गवर्मेंट हाउस समुद्रतटसे ३०० गजकी दूरीपर है। दो बड़े बड़े गिरजे भी हैं जो पेरिसके नोत्र-दामकी नकल बताये जाते हैं। समुद्रमें आध मीलतक लोहेका पुल-सा बना है जिसपर जहाजोंसे यात्री, माल वगैरह उतारे जाते हैं। इस पुलके प्रवेशपर अर्ध गोलाकार आठ खम्भे खड़े हैं जिन्हें डूप्ले जिञ्जीके मन्दिरसे उठवा लाया था। इन्हींके बीच डूप्लेकी भव्य मूर्ति भी खड़ी है जिसके आधार भी उसी मन्दिरसे लाये गये दूसरे खम्भे हैं। बन्दरगाहमें एक प्रकाश स्तम्भ भी है जो पानीसे ९० फुट ऊँचा है। समुद्रतटके किनारे किनारे एक सड़क चारों ओर जाती है। यह सड़क अच्छी बनी है और इसपर टहलना बड़ा स्फूर्त्तिदायक है। यहाँ फ्रेञ्च हाईकोर्ट भी है। एक छोटेसे हॉलमें एक ओर जज और जूरी वगैरह बैठते हैं और सामने वकील और दर्शक वगैरह। हम लोग देख ही रहे थे कि चीफ जस्टिस साहब वहाँ आये। हम लोगोंके यहाँ अंगरेजोंको देखकर जो दहशत फैल जाती है यहाँ वैसी कुछ बात देखनेमें नहीं आयी। चीफ जस्टिस आये और अपने काम-पर चले गये; किसीने उन्हें सलाम तक नहीं किया।

पाण्डिचेरीमें बहुतसे 'आर्टिजन वेल्स' भी हैं। ये कुएं धरतीमें 'बोरिंग' करके बनाये जाते हैं और इनमेंसे खुदबखुद

२

पानी निकला करता है। ये खेतीके लिए बड़े अच्छे हैं। शामको हम लोगोंने एक मद्रासी भोजनालयमें भोजन किया। चावलके ठोस वड़े जिन्हें "इडली" कहते हैं, वड़े चावसे खाये जाते हैं। मिर्च इधर वहुत खाते हैं। रातके नौ वजे हम रेलपर वैठे ही थे कि फिर पुलिसवाले आये और फिर अपना नाम वगैरह लिखनेको कहा हमने फिर नाम ठिकाना लिखकर छुटकारा पाया। लौटनेके समय फिर चिन्नावावूसमुद्रम्में सामान दिखाना पड़ा। विल्लूपुरम् रातके ११ वजे वापस आये।

## तिरुवन्नमलय

ठीक उसी समय दूसरी गाड़ीसे यात्री गाड़ीपर हमारे वाकी साथी भी, जो दिनभर तिरुवन्नमलयमें थे, वापस आगये और हम तुरत चिदम्बरम्के लिए चले और वहां दो वजे पहुँच गये; पर आरामसे अपनी गाड़ीमें सवेरे तक सोये रहे।

अपने अन्य साथियोंसे हमें मालूम हुआ कि तिरुवन्नमलयका अर्थ है पवित्र लाल पर्वत क्योंकि सूर्योदयके पहले यह लाल दिखाई देता है। पहाड़ जंगलोंसे भरा है और शिखरपर सिर्फ पैदल ही जा सकते हैं पर शिखरपर एक चट्टान लिंगाकार है, जो शिवलिंग माना जाता है। मन्दिरपर कितनी वार चढ़ाइयाँ हो चुकी हैं। पर्वतकी जड़के पास ही मंदिर है जहाँ महादेवके 'तेजोलिंग' का दर्शन है। यहाँके चार गोपुर १२-महलके हैं और पाँच ९-महलके। मंदिरमें शिलालेख वहुतसे हैं और वड़ी सुन्दर खुदाईका काम भी है। एक मन्दिरका जीर्णोद्धार भी किया गया है। कहा जाता है कि एक समय जव संसार अंधकारसे ढक गया तो पार्वतीकी प्रार्थनापर शिव यहाँ अग्नि वा तेजके रूपमें प्रकट हुए थे। पहाड़पर एक तालाव है ( मुलाइ

प्पल तीर्थ ) जिसका पानी बहुत साफ है। यहाँ कई गुफाएं भी पहाड़ काटकर बनायी गयी हैं। मन्दिरमें पचासों लाख रुपयेके भारी और मूल्यवान रत्न और गहने हैं जिन्हें हम एक मित्रकी सहायतासे देख सके। ये गहने बहुत सुरक्षित रहते हैं।

## चिदम्बरम्

चिदम्बरम्में तीन बड़े मंदिर हैं। नटराज ( शिव ), शिवकामसुन्दरी ( पार्वती ), सुब्रह्मण्यं ( कार्तिकेय ) तथा विनायक ( गणेश ) के। शिवकी ताण्डव करती हुई मूर्ति है और विष्णुकी शेषशायी मूर्ति भी है। माणिक तथा स्फटिकके दो शिवलिंग भी हैं। मूर्तियाँ सभी बड़ी ही कलापूर्ण हैं। शिवकी मूर्तिकी नकल ( सोनेसे ) उनके मन्दिरके प्रवेश द्वारपर एक भक्तने हाल ही में बनवाकर लगवायी है। मन्दिरोंके गुम्बजपर सोने चांदीके पत्तर जड़े हैं। सभी दसवीं शताब्दीके बने हैं। १००० खम्भोंका एक हॉल भी है। इसके विषयमें डॉक्टर फर्गुसनने लिखा है कि इसके समान कलापूर्ण खुदाईका काम दक्षिण भरमें कहीं नहीं है। सारा मन्दिर एक रथकी शकलका बना है। बगलमें घोड़े हाथी पहिये वगैरह बने हैं सचमुच यहाँकी कला दर्शनीय है। मन्दिरकी विशालताके विषयमें तो कुछ कहना ही वृथा है।

### अन्नामलय विश्वविद्यालय

चार साल पहले राजा अन्नामलय चेटियर नामक एक सज्जनने तीस लाख रुपये दान दिये थे। उनके नामपर यहाँ अन्नामलय विश्वविद्यालय है। इमारतें तो साधारण ही हैं, पर पढ़ाईकी बड़ी तारीफ सुननेमें आयी। जहाँ यह है उस स्थानको अन्नामलयनगर कहते हैं।

## कुम्भकोणम्

रातके पौने-दो बजे चलकर हम सवेरे पौने पांच बजे कुम्भकोणम पहुँचे। यह बड़ा शहर है और कावेरीके तटपर बसा है। नदी बहुत कम चौड़ी है और छोटी छोटी मछलियां नहानेवालोंको खूब गुदगुदाती हैं। यहाँ चक्रपाणि, सार्ङ्गपाणि, कुंभेश्वर तथा रामस्वामीके मंदिर हैं। यों तो सभी मंदिरोंमें नक्काशीका काम अच्छा है किंतु सार्ङ्गपाणिके मन्दिरके आंगनके खम्भे बहुत ही अच्छे हैं।

कुम्भकोणम्में पीतल और रेशमका व्यापार होता है किन्तु अफसोसके साथ लिखना पड़ता है कि सारा सूत विदेशी रहता है। यहाँ डाक्टर साम्बशिवंने एक बहुत ही अच्छा आरोग्याश्रम खोल रखा है। यहाँ एक्स रे वगैरहकी बिलकुल नयी मशीनें हैं। आपने वीयना वगैरहमें बहुत दिनोंतक अध्ययन किया है। आप बहुत ही मिलनसार तथा सज्जन पुरुष हैं। इस आरोग्याश्रममें १४ रोगियोंके रहनेकी जगह है।

मध्य-वित्तके जिन लोगों को अस्पतालमें रहनेमें हिचक होती है, साथ ही घरपर इलाज नहीं करा सकते, उनके लिए ऐसे आरोग्याश्रम बड़े अच्छे होते हैं। उत्तरमें ऐसे आरोग्याश्रमकी बड़ी आवश्यता है परन्तु साथ ही इसकी वहाँ बड़ी कमी है। क्या उत्साही नवयुवक डॉक्टर ध्यान देंगे ?

## तंजोर

कुम्भकोणम्से भी हम रातके तीसरे पहर चले और तंजोर सुबहके पहले ही पहुँच गये। यहाँ कावेरीकी एक नहर है। यहाँ भी शिवका मन्दिर है जो बहुत ही पुराना कहा जाता है। इस मन्दिरकी दीवारोंपर शिलालेख हैं जो चौथी शताब्दीके

हैं। इसीसे इसकी प्राचीनताका अनुमान किया जा सकता है। यह मन्दिर दक्षिण भारतके सभी मन्दिरोंसे ऊँचा है। मन्दिरके सामने एक ही पत्थरका वना हुआ वड़ा भारी नान्दी है जो हिन्दुस्तानमें सवसे वड़ा नान्दी वताया जाता है। मन्दिरके शिखरपर एक ही परत्थरका एक गोला है जिसका वजन ८० टन आंका जाता है। कहते हैं कि इसे वहाँ रखनेके लिए मन्दिर से पाँच मील दूर एक गाँवसे मंदिरके शिखरतक एक सड़क वनायी गयी और उसीपरसे वह गोला वहाँ रखा जाकर सड़क साफ कर दी गयी। अव तो इस सड़कका कुछ भी पता नहीं चलता। तंजोर दक्षिण भारतका वहुत ही प्रधान साहित्यिक, धार्मिक तथा राजनीतिक केन्द्र रह चुका है।

यहाँपर राजमहल भी दर्शनीय स्थानोंमेंसे है। पहले यहाँ नायक राजा राज्य करते थे। उन्हें हटाकर मराठे राजा हुए। उनका राज्य १८५५ ई० से अंगरेजोंने ले लिया। महलका सवसे प्राचीन खण्ड नायक राजाओंका ही वनवाया हुआ है। मराठोंने भी वहुतसे खंड जोड़े हैं। नायकोंकी एक मीनार और एक दरवार-हॉल प्रमुख है। मराठोंने अपने शस्त्रागारके ऊपर वहुत ऊँची मीनार पहरेके लिए वनवायी थी। ये दोनों मौजूद हैं। मराठा राजा सरभोजीने एक पुस्तकालय स्थापित किया था जिसमें अंगरेजी फ्रेंच वगैरहके अलावा १८००० तो सिर्फ संस्कृत की हस्तलिखित पुस्तकें हैं। इन सभी इमारतोंकी देखभाल सरकारके अधीन है। पुस्तकालयकी कितावें वहुत अच्छी तरह रखी हुई हैं। मराठोंके दरवार-हॉलमें सभी मराठे राजाओंकी तसवीरें वनी हुई हैं। मराठोंके वंशधरोंको सिर्फ रहनेके लिए एक खंड मिला हुआ है। एक वहुत दर्शनीय मन्दिर भी महलमें है।

# त्रिचनापल्ली

'दक्षिणकी दिल्ली' अगर हम किसी नगरीको कहें तो वह होगी—त्रिचनापल्ली। दिल्ली हीकी तरह इसके भी अनेक स्वामी हो चुके हैं, यह भी एकके हाथसे सिर्फ इसीलिए निकली कि दूसरेके हाथोंमें पड़े। एक सूत्रमें त्रिचनापल्लीका इतिहास यों है:-

"कालक्रमेण जगतः परिवर्त्तमाना
चक्रार पंक्तिरिव गच्छति भाग्यपंक्तिः।"

तंजोरसे चलकर हम घण्टे ही भर वाद त्रिचनापल्ली पहुँच गये। दक्षिण भारतमें इस नगरके लिए जितना खून खराबा हुआ उतना शायद ही किसी नगरके लिए हुआ हो। किन्तु आजकल यह भी हमारी महामहिमामयी सरकारकी छत्र-छायामें शांतिसे सो रहा है। त्रिचनापल्ली अपने 'रॉक टैंपुल' के लिए प्रसिद्ध है। यह मन्दिर एक चट्टानपर स्थित है जो शहरके वीच दैत्याकार खड़ा है। पहले शहरके चारोंओर किलेबन्दी थी जो अब तोड़ दी गयी है और उसीसे चारों ओरकी खाई भर दी गयी है। यह किला एक मील लम्बा तथा आध मील चौड़ा था। यह चट्टान सड़कसे २७३ फुट ऊँची है। ऊपर जानेके लिए सायादार सीढ़ियाँ बनी हैं जिनकी गिनती चार सौसे कुछ ही ऊपर है। सबसे ऊपर गणेशजीका मन्दिर है। बीचमें शिवजी-का मन्दिर है जो कलाकी दृष्टिसे बहुत ही सुन्दर है। इसमें छतके पत्थरको काटकर पत्थरकी सिकड़ी वनायी गयी है। ऊपर चट्टानको खोदकर एक छोटी सी कोठरी बनायी है जिसे अंगरेजोंने अस्त्रागार बनाया था। गणेशके मन्दिरसे शहर और आसपासकी भूमिका बड़ा ही सुन्दर दृश्य दिखाई पड़ता है। चट्टानकी जड़के पास एक वड़ा भारी तालाव है जो तेप्पकुलम

कहलाता है। इसके पास सेण्ट जोजेफ चर्च और कॉलेज है। दोनों ही स्थान दर्शनीय हैं। इसीमें वह मकान है जिसमें पहले क्लाइव रहता था। चन्दा साहवकी कब्र भी दर्शनीय है। इसे चन्दा साहवने स्वयं वनवाया था।

## श्रीरंग

त्रिचनापल्लीसे सात मील दूर श्रीरगजीका मन्दिर है। यहाँ रेलका भी स्टेशन है और त्रिचनापल्लीसे वस-सर्विस भी है। श्रीरंग कावेरीसे घिरा हुआ टापू सरीखा है और इसपर जानेके लिए पुल वना हुआ है। श्रीरंगका मन्दिर सात वहुत ऊँची दीवारोंसे घिरा है, जिसपर १५ गोपुरम् वने हैं। सवसे पहला गोपुरम् वहुत ही विशाल और वहुत सुन्दर वना है। यहाँपर विष्णुकी शेषशायी मूर्ति है। मन्दिरमें खम्भोंपर भारी तोंदवाले सेठोंकी भी मूर्तियाँ खुदी हैं। श्रीरंगजीकी मूर्तिसे आध मीलपर जम्वुकेश्वरका मन्दिर है। यहाँ शिवका जललिंग है। शिवलिंगके पास ही जलका सोता वहता रहता है और शिवलिंगके ऊपर जामुनके पेड़की छाया है।

## धनुषकोडी

त्रिचनापल्लीसे रातके ९ वजे चलकर सवेरे हम लोग धनुषकोडी पहुँचे। यहाँसे लंकाके लिए जहाज जाता है। यहाँ समुद्र २० मील चौड़ा है और जहाज २ घण्टेमें पार होता है। यहाँ ठहरनेके लिए धर्मशाला ( चौलट्री ) भी है जहाँ भोजन मुफ्त मिलता है। यहाँ कोई उल्लेख्य मन्दिर वगैरह नहीं है। स्टेशनसे कोसभरकी दूरीपर समुद्रमें लोग नहाते हैं और पिंड-दान करते हैं। वहाँतक आने जानेके लिए वैलगाड़ी चार रुपयेमें

मिलती है, पर पैदल चलना आसान है क्योंकि आगेकी बालू कड़ी मिलती है। अगर लंकाकी यात्रा करनेका विचार न भी हो तो जहाज देख लेना चाहिए क्योंकि उससे समुद्री जहाजका अनुमान हो जाता है। धनुषकोडीसे हम लोग उसी दिन रामेश्वर चले आये।

## रामेश्वर

रामेश्वर इसी नामके एक टापूपर स्थित है। यहाँकी आबादी ८ हजार है। यहाँ एक छोटा-सा बाजार भी है जहाँ प्रायः सभी आवश्यक चीजें मिल जाती हैं। कहा जाता है कि सेतु बाँधनेमें सफलता पानेके लिए रामने यहाँ शिवकी पूजा की थी। मन्दिरके चारों ओर ऊँची ऊँची तीन दालानें बनी हैं। सबसे पहली दालान १००० × ६०० फुट है। किन्तु इन दालानोंमें विशालताके सिवा और कोई खूबी देखनेमें नहीं आयी। बहुतसा हिस्सा इधर तोड़कर नया बनाया गया है जिसमें हवा और रोशनीके लिए काफी प्रबन्ध है। मूर्तिपर चढ़ानेके लिए गंगा-जल मन्दिरकी ओरसे बिकता है। जिससे मन्दिरको काफी लाभ है। अपना जल ले जानेपर कर स्वरूप दो रुपये लग जाते हैं। मन्दिरमें जवाहिरात भी बहुत हैं और कुछ रुपये देनेपर दिखाये जाते हैं। रामेश्वरमें अनेक तालाब, कुएं वगैरह हैं जिनमें स्नान करनेसे बड़ा पुण्य होता है। किन्तु यहाँपर जैसा आनन्द समुद्रमें स्नान करनेपर होता है, वैसा स्नानका आनन्द और कहीं भी नहीं है। धनुषकोडीका समुद्रस्नान तो इसके सामने फीका मालूम पड़ता है। कारण यह है कि वहाँका समुद्र छिछला है किन्तु यहाँ तुरत ही गहराई शुरू हो जाती है।

यहाँ रामझरोखा नामक एक स्थान है जो एक ऊँचे टीलेपर बना हुआ एक छोटासा मन्दिर है। उसपरसे सारे रामेश्वर द्वीपका बड़ा सुन्दर दृश्य दिखाई पड़ता है। यह दृश्य हरएक यात्रीको देखना चाहिए। शामके कुछ पहले जाकर सूर्यास्त-तक यह दृश्य देखा जाय तो बड़ा आनन्द आता है। सिवा मन्दिरके रामेश्वरमें और कुछ देखनेका नहीं है, इससे घुमक्कड़ों को यहाँ अधिक समय बरबाद नहीं करना चाहिए; क्योंकि जगह गन्दी है। श्रद्धालु दर्शनार्थियोंकी बात दूसरी है।

## रामेश्वरसे रवानगी

रामेश्वर द्वीपको महादेश ('मेनलैण्ड') से मिलानेवाला एक पुल है जो मण्डपम तथा पामवन स्टेशनके बीच है। रामेश्वर जानेके समय रात हो गयी थी, इससे हम इस पुलको अच्छी तरह देख नहीं सके थे किन्तु लौटते वक्त हम रामेश्वरसे दिनके दो बजे चले और करीब तीन बजे पुल पार किया। कहा जाता है कि रामचन्द्र जब लंकाके लिए पुल बंधवाने लगे तो पहले वही पुल बाँधा। इससे उन्हें आगे बढ़नेके लिए कुछ सहारा मिल गया। फिर आगे धनुषकोडीसे तेलाइमन्नार तक पुल बंधवाया गया। इसमें सत्यकी मात्रा कहाँतक है यह बताना मेरा काम नहीं है किन्तु हम यह देखकर चकित हो गये कि पुलके नीचे उस गहरे समुद्रमें चट्टानें पड़ी हैं जो पानीसे करीब हाथभर निकली हैं। समुद्रकी लहरें उनपर आ आकर टकराती हैं और फिर सफेद फेन बनकर बिखर जाती हैं। पुल भी उन्हीं-पर बनाया गया है। इन चट्टानोंको देखकर बड़ी ही खुशी हुई कि अगर कथा सच हो तो हिन्दुओंने समुद्रकी इंजीनियरिंगमें कहाँतक तरक्की की इसका कुछ पता इन्हीं अवशेषोंसे लग सकता

है। पुलके बाद भी मण्डपंकी तरफ कुछ दूरतककी जमीनकी सिर्फ एक रेखाही सी है।

हमने इधर दक्षिणमें दो प्रथाएं बहुत अच्छी देखीं। सफाई तो इधरके लोग हद दरजेकी रखते हैं, क्या घर और क्या बाहर। सबेरे घरको झाड़ बुहार कर दरवाजेपर सभी तरह तरहकी आकृतियाँ खड़ियासे बनाते हैं। उत्तर भारतमें कभी-कभी सिर्फ त्यौहारोंपर ही "चौक पूरा" जाता है पर इधर ये रोज ही "चौक पूरते" रहते हैं। छोटी लड़कियोंको ऐसी सुन्दर चित्रकारी करते देखकर किसे आनन्द नहीं होगा।

दूसरी प्रथा हमने यह देखी कि जब किसी सम्मानित व्यक्तिसे लोग मिलते हैं तो नीबू भेंट करते हैं। हमने एक सज्जनसे पूछा कि मीठे फलोंके रहते हुए भी आप लोग नीबू क्यों भेंट करते हैं। उन्होंने उत्तर दिया कि नीबू सब फलोंमें स्वास्थ्यकर समझा जाता है, इसीसे नीबू भेंट किया जाता है। क्या उत्तर भारत भी इस प्रथाको अपना सकेगा?

## मदुरा

मीनाक्षी देवीकी प्यारी नगरी मदुराका महत्व आज भी अक्षुण्ण बना है। अपने ढंगका यह अकेला ही मन्दिर रहा और इसी कारण न केवल भारतसे बल्कि विदेशोंसे भी रोज सैकड़ों यात्री यहाँ दर्शनार्थ आते रहे हैं। रामेश्वरसे १॥ बजे चलकर हम उसी दिन सन्ध्याके ७। बजे मदुरा पहुँचे। मदुरा केवल तीर्थस्थान ही नहीं है, बल्कि बहुत दिनोंतक यह दक्षिणकी एक प्रसिद्ध राजधानी रह चुकी है जिसकी इमारतें अब भी आँसू पोंछनेको खड़ी हैं। पहले यहाँ मुसलमानोंका राज्य था जिनके समयमें मन्दिरोंकी बहुत क्षति हुई। कालक्रमसे उनके बाद

नायक वंश सिंहासनपर आया। नायकोंको अगर हम दक्षिणके मुगल कहें तो अत्युक्ति न होगी क्योंकि इन्हींके समयमें इधर कला कौशलकी बहुत उन्नति हुई। यद्यपि मीनाक्षीके वर्तमान मन्दिरमें भी अनेक नायकोंका हाथ रहा है, पर प्रधानतः यह सुप्रसिद्ध तिरुमल नायकका ही बनाया हुआ है। तिरुमलने १६२३ से १६५९ ई० तक राज्य किया। इसने सभी जगह मन्दिरोंका पुनरुद्धार कराया और स्वयं भी अपने लिए बड़े बड़े महल वगैरह बनवाये। नौ गोपुरम्से घिरा हुआ मीनाक्षीका मन्दिर ८४७ × ७२९ फुटके घेरेमें है। मन्दिरके सामने सड़ककी दूसरी ओर वसन्त मन्डप है जहाँ मीनाक्षी सालमें एक बार तैल स्नान करती हैं। अहातेके अन्दर मीनाक्षी देवी तथा सुन्दरेश्वर ( शिव ) के मन्दिर प्रधान हैं और विनायक, कार्तिकेय वगैरहके भी मन्दिर हैं। सुब्रह्मण्यंका मन्दिर अलग ४ मीलपर है। यह भी दर्शनीय है। अहाते हीमें एक बड़ा तालाब भी है जिसे स्वर्णकमल-ताल कहते हैं। इसके किनारे जो दालान बनी है उसमें चित्रोंके द्वारा अनेक पौराणिक कहानियाँ बतायी गयी हैं।

मन्दिरके प्रवेश-द्वारकी दालानमें पाँचों पाण्डवोंकी मूर्तियाँ हैं जिनके विषयमें कहा जाता है कि वे मीनाक्षी देवीका दर्शन करने आये थे। यहाँ सभी जगह एक विचित्र आकृति बना देते हैं। यह कुछ-कुछ सिंह-सरीखा होता है जिसकी जीभ बड़ी लम्बी रहती है। यह सभी जगह बना हुआ है। इसे यलि कहते हैं। एक यलिके मुँहके अन्दरका पत्थर काटकर उसे उसीके अन्दर गोलेके रूपमें रहने दिया है पर यह इस कारीगरीसे बनाया गया है कि वह बाहर नहीं निकाला जा सकता। एक पत्थरके खम्भेको काटकर उसमें पतले-पतले बहुतसे खम्भे बनाये गये हैं जिन्हें ठोंकनेपर भिन्न भिन्न स्वर

निकलते हैं [ ऐसे खम्भे हमने तेनकाशीमें देखे जो शायद मदुराकी नकल है ]। मीनाक्षी देवीकी प्रतिमा काले पत्थरकी बड़ी सुन्दर है। उसपर सोनेके दामी गहने वगैहर बाँधे रहते हैं जो शामको स्नान करानेके समय उतारे जाते हैं। एक मित्रकी बदौलत हमें यह स्नान देखनेका भी मौका मिल गया। मूर्तिको स्नान कराके फिर गहने कपड़े वगैरह ज्योंकी त्यों कर दिये गये। सुन्दरेश्वर [ शिवलिंग ] पर भी सोनेकी एक चादर है जिसमें त्रिपुण्डकी शकलमें हीरोंकी कतारें हैं और बीचमें एक बड़ासा लाल है। इसे भी स्नान करानेके समय हटा देते हैं। और भी जगह जगह मूर्तियोंको कपड़ा पहनाये हुए देखा। इससे मूर्तियोंकी सुन्दरता तो गायब हो ही जाती हैं और मूर्तियोंका 'नंगापन' कपड़ोंके कारण और भी भयंकर हो उठता है। सुन्दरेश्वरके मन्दिरके सामने दालानमें खम्भोंपर जो मूर्तियाँ बनी हैं, वे देखते ही बनती हैं। उनका वर्णन कर मैं उनकी सुन्दरताका उपहास नहीं किया चाहता।

मदुराका दूसरा दर्शनीय स्थान है महाराज तिरुमल नायकका प्रासाद। यह स्टेशनसे पौन मीलपर है और बहुत ही सुन्दर और विशाल बना है। नायक-स्थापत्यका यह बहुत ही सुन्दर नमूना है। ऊँचे गोल खंभोंके बड़े-बड़े कमरे बने हैं। किंतु इसकी सुन्दरता भी नष्ट कर दी गयी है। सरकारी दफ़्तरोंके काममें लाये जाये जानेके योग्य बनानेके लिए इसे तारों और तख्तोंसे इस तरह खण्ड खण्ड कर दिया गया है कि इसकी बहुत कुछ सुन्दरता मारी गयी है। स्थान स्थानपर ऊपर भी काठकी तख्तबन्दी कर दी गयी है क्योंकि वैसे वकीलोंकी बहस सुनाई नहीं पड़ती थी। जहाँ कभी राजाधिराज तिरुमल नायक राज्य करते थे, वहाँ अब कलक्टर साहब बैठकर शासन करते

हैं। तिरुमलका स्नानागार भी हमने देखा। यह बड़ा सा "हॉल" है जिसमें नीचे पानी भर दिया जाता था। ऊपर रानियोंके बैठ कर देखनेके लिए स्थान बना है।

मदुरा रेशम पीतल वगैरहकी चीजोंके लिए केन्द्र है और यहाँकी कारीगरी भी अच्छी होती है। हिंदीका प्रचार हमें सभी जगह दिखाई दिया। मदुरामें तो बहुत अच्छा प्रचार है। यहाँके हिंदी-मन्दिरमें विद्यार्थी रहते और पढ़ते हैं। एक छोटासा पुस्तकालय है और दो पत्र भी आते हैं। किंतु तामिल दस्तखतोंमें अंग्रेजीके आदि-अक्षर देखकर लोगोंकी दास मनोवृत्तिपर बड़ा खेद हुआ। मदुरामें ईसाई मिशनका बड़ा जोर है और इधर गाँव गाँवमें गिरजे हैं। ईसाइयोंकी संख्या दिनोंदिन बढ़ती ही जाती है।

मदुरासे १३ मीलपर अलगरकोइल नामक स्थानमें विष्णुका मन्दिर है। यह स्थान बड़ा ही रमणीक है। पहले इसके चारों ओर किलेबन्दी थी जिसका भग्नावशेष अब भी पड़ा है। टूटे हुए नायकोंके ढंगके महल वगैरह भी हैं। शायद यह नायकोंके समयमें यह स्थान शाही निवास रहा हो। यहाँ मन्दिर पहाड़की जड़में और मूर्ति पहाड़ हीमें खुदी हुई है। पहाड़पर दो मील जानेपर एक झरना मिलता है। वहाँ जानेका रास्ता इतना सुन्दर है कि सिर्फ उसीके लिए यहाँ आना चाहिए। सारे रास्तेपर छायादार वृक्ष लगे हैं। मन्दिरमें बिजली और पानीकल भी है। मदुरासे यहाँतक लॉरीका किराया आठ आना लगता है।

## श्रीवैकुण्ठम्

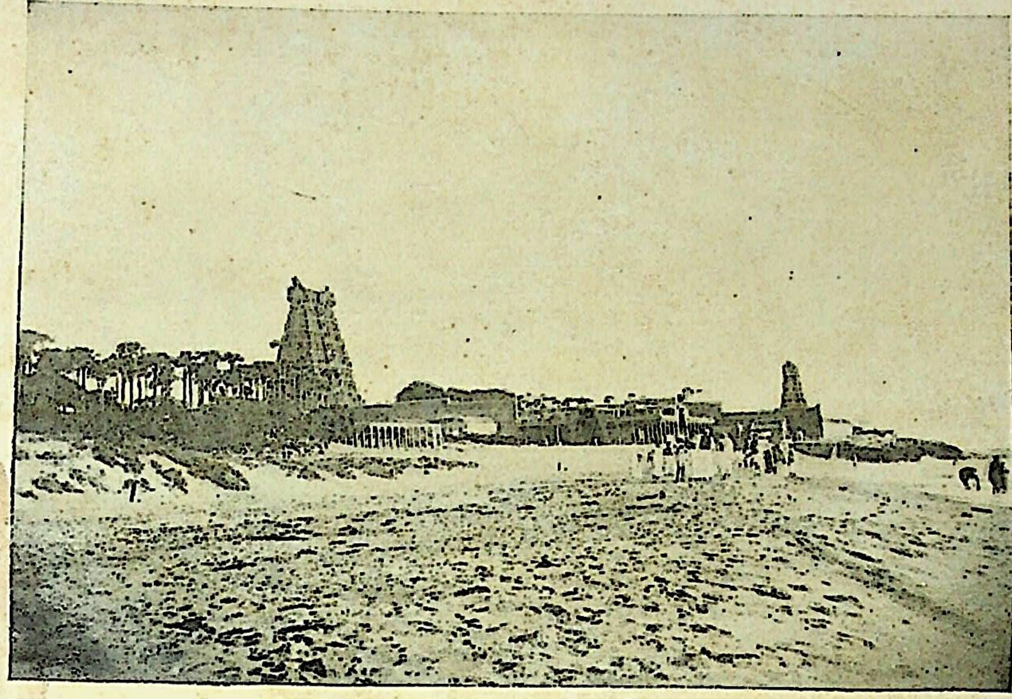
मदुरासे सवेरे छः बजे चलकर तिनेवेलीमें गाड़ी बदलकर ग्यारह बजे हम श्रीवैकुंठम् पहुँचे। यहाँ श्री वैकुंठनाथका

मंदिर है। यह मन्दिर वैष्णवोंके लिए महत्त्वपूर्ण है। वहाँसे तीन मीलकी दूरी पर अलवार तिरुनगरी नामक स्थानमें भी एक मन्दिर है जो वैष्णवोंके लिए बहुत महत्वपूर्ण है। यहाँ लॉरी भी जाती है। पर हमने यह यात्रा वैलगाड़ियों (वण्डी) पर की। यह मन्दिर वैष्णवोंके १०८ क्षेत्रोंमेंसे एक है। यह स्वामी नम्मालवरका जन्मस्थान है। ये एक प्रसिद्ध सन्त कवि हुए हैं। इन्होंने तामिल भाषामें तिरुमयमौलि नामक १००० छन्दोंकी पुस्तकमें चारों वेदोंका सार लिख दिया है। इन्होंने ३२ सालकी अवस्थामें देहत्याग दिया। कहा जाता है कि जनमते ही ये एक इमलीके पेड़में प्रविष्ट हो गये और फिर १६ वर्षकी अवस्थामें उससे बाहर हुए जिससे वह पेड़ सातखण्ड हो गया। वह पेड़ अब भी है और यात्रियोंको दिखाया जाता है। यहाँ उन्हीं अलवारकी मूर्ति है। यह स्थान भी दर्शनीय है।

## तिरुचेन्दूर

"तामिलनाडके प्राचीनतम मन्दिरोंमें होनेके कारण और तिन्नेवेली जिलेके मन्दिरोंमें आमदनी और पवित्रताके विचारसे सबसे महत्त्वपूर्ण होनेके कारण, तिरुचेन्दूरके श्री सुब्रह्मण्यं स्वामी देवस्थान ( मन्दिर ) ने 'हिंदू रेलिजियस एण्डाउमेण्ट वोर्ड' का ध्यान बहुत पहले, १९२८ ई० में ही, आकर्षित किया।"

यह कथन उक्त मन्दिरके ट्रस्टीका है। पवित्रताके ख्यालसे चाहे यह सबसे महत्त्वपूर्ण हो या नहीं, किंतु स्थितिके लिहाजसे तो यह अबतक देखे हुए मन्दिरोंमें निस्सदेह हमें सबसे महत्त्वपूर्ण मालूम हुआ। अलवर तिरुनगरीसे पौने चार बजे चलकर करीब छ बजे हम तिरुचेंदूर पहुँचे। ये सभी मन्दिर तिन्नेवेली-तिरुचेन्दूर ब्रांच लाइनपर हैं। समुद्र-तटपर बसा हुआ यह



तिरुचेन्दूरमें समुद्र तटपर सुब्रह्मण्यम् स्वामीका मन्दिर

नगर पुराना मालूम होता है। मन्दिर स्टेशनसे पौन मीलपर है। मन्दिरमें, "जिसका चरण निरन्तर रत्नेश धो रहा है", सुब्रह्मण्यं और उनको दो रानियोंकी मूर्तियाँ स्थापित हैं। हमें यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि मन्दिरका पुनर्निर्माण मन्दिर हीके रुपयोंसे कराया जा रहा है। मन्दिरमें विजली वत्तो भी है। मन्दिरका संचालन अच्छो तरह होता हुआ-सा जान पड़ा। यहाँ समुद्र-स्नानमें वड़ा आनन्द आता है; पर मन्दिरसे कुछ दूर हटकर स्नान करना चाहिए।

## तिन्नेवेली

तिरुचेन्दूरसे दूसरे दिन ९ वजे चलकर १२ वजे हम फिर तिन्नेवेली वापस पहुँचे। यह ताम्रपर्णी नदोके दोनों किनारे वसा है। एक तरफ शहर है और दूसरी ओर कचहरियाँ कॉलेज वगैरह हैं। यहाँ मिशनरी वड़ा काम कर रहे हैं और जनसंख्या-का बड़ा हिस्सा ईसाई है। ये लड़कोंको पढ़ाते हैं और बहुतसे गरीब विद्यार्थियोंको खाना-कपड़ा भी देते हैं। तिन्नेवेलीमें नेल्लि-अप्पन (शिव) और कांतिमती (पार्वती) का मन्दिर है। यहाँ सुब्रह्मण्यंकी छः मुखी मूर्ति वड़ी सुन्दर है और एक ऊँचे चवूतरेपर-जिसके चारों ओर भाले गड़े हैं, रखी है। इससे यात्री इसके चारोंओर घूमकर देख सकता है। सारा मन्दिर एक ही वार बना है; दूसरे मन्दिरोंकी तरह इसमें पीछेसे हिस्से नहीं वनाये गये। इससे यह मन्दिर अवश्य देखना चाहिए, क्योंकि इससे द्रविड़ स्थापत्यका अच्छी तरह पता चल जाता है। मन्दिरमें लकड़ीपर नक्काशोका काम वहुत ही सुन्दर है, जो द्रविड़ोंकी विशेषता है। पालमकोट्टामें, जहाँ तिन्नेवेल्लीको कचहरियाँ हैं, वड़ा-सा एक सुन्दर मैदान है जहाँ शामको लोग टहलने जाते हैं।

## तेन काशी

तिन्नेवेलीसे दूसरे दिन तड़के चलकर ९ बजे हम तेनकाशी पहुँचे। यह दक्षिणकी काशी कहाती है। यहाँ विश्वनाथ स्वामी (शिव) का मंदिर है। मन्दिरके गोपुरका बीचका भाग १८ वीं शताब्दीके अन्तमें जल गया था और यह अबतक मरम्मत नहीं कराया गया है। इससे मन्दिर टूटी-फूटी हालतमें जान पड़ता है। मन्दिरके मंडपमें छः बड़े बड़े खम्भे हैं जिनमें बड़ी बड़ी मूर्तियाँ बनी हैं। तेन काशी यथार्थमें 'कोट्टालम' के झरनेके लिए प्रसिद्ध है जो शहरसे ३॥ मीलकी दूरीपर है। सारा रास्ता छायादार है। यह बड़ा स्वास्थ्यप्रद स्थान है और त्रावंकोरके महाराजतक बराबर यहाँ आते हैं। बड़ी उंचाईसे पानी नीचे गिरता है। यहाँ नहानेमें बड़ा आनन्द आता है। आजकल धारा बहुत तेज नहीं थी, इससे हम सीधे झरनेमें नहा सके। किन्तु बरसातके दिनोंमें जब यह बहुत चौड़ी और तेज हो जाती है, कोई इसके नीचे नहीं नहा सकता। उस समय लोग उसीसे निकली हुई नदीमें नहाते हैं।

झरनेके ठीक नीचे लोहेकी रेलिंग लगी है जिसे पकड़कर यात्री मजेमें नहा सकते हैं। धाराके गिरनेसे एक बड़ा-सा कुंड भी बन गया है जिसमें तैरनेका भी आनन्द आता है। नहानेकी जैसी सुविधा यहाँ है वैसी बहुतसे अमीरोंके घरपर भी नहीं मिलती। पहले ऊपर भी रेलिंग वगैरह लगी थी जिससे यहाँ भी नहानेकी सुविधा थी। पर पानीने उसे बहा दिया इससे अब वहाँ कोई नहा नहीं सकता। ऊपरसे चारों ओरका दृश्य बड़ा सुन्दर दिखाई पड़ता है। यहाँका स्नान बड़ा ही स्फूर्ति-दायक रहा। कपड़े भी यहाँके जलमें बहुत साफ हुए। यहाँ भी एक छोटा किन्तु बहुत खूबसूरत शिव-मन्दिर है। इसमें

बहुत-सा हिस्सा नया बना है जो देखने योग्य है। किसी भक्तने इसके लिए रुपये दिये हैं।

## क्विलन और वर्कला

तेन काशीसे हम रातके दस बजेकी गाड़ीसे चलकर सबेरे क्विलन पहुँचे। यह बड़ा शहर है और यहाँ बन्दरगाह, राजप्रासाद वगैरह देखनेकी चीजें हैं। किन्तु समयाभावके कारण हम सिर्फ समुद्रस्नान कर सके। क्विलनसे १० बजे चलकर ११ बजे हम वर्कला पहुँचे। समुद्र तटपर बसा हुआ वह यह नगर त्रावंकोर राज्यमें और यहाँ जनार्दनका मन्दिर है समुद्रतटपर लाल रंगकी चट्टानें हैं, जिनमेंसे एक बहुत छोटीसी धारा बहती है। किन्तु न तो इस पानीका स्वाद ही अच्छा है और न इसमें नहाया ही जा सकता है। जनार्दनका मन्दिर छोटासा किन्तु अच्छा बना है। यह स्थान भी घुमक्कड़ोंके विशेष महत्त्वका नहीं है।

## तिरुवनन्तपुरं (त्रावंकोर)*

'मलयालम' तबतक हमारे लिए सिर्फ 'मलयालम' था जबतक हम 'मलयालम' नहीं आये और जबतक 'मलय', 'आलम' और उसके बीचकी भूमि नहीं देखी। 'मलय' का अर्थ है 'पहाड़' और 'आलम' का अर्थ है 'समुद्र'। उत्तरमें पश्चिमी घाट और बाकी तीनों ओर समुद्र—यह है मलयालम देशकी सीमा। मलयालममें मलयालम नीची ऊँची भूमिको कहते हैं। यों तो मलयालम देश क्विलन और वर्कलासे ही शुरू हो गया था, किन्तु इसका सच्चा रूप हमपर तिरुवनन्तपुर (त्रिवेन्द्रम्) में ही प्रकट

---

* तिरुवनन्तपुर, तिरु अनन्तपुरंका बदला हुआ रूप है, जिसे अंग्रेजोंने 'ट्रिवैन्ड्रम' कर दिया है। 'तिरु' का अर्थ है सुन्दर।

हुआ। रियासत त्रावंकोरकी राजधानी होनेके कारण यह नगर वहुत ही तरक्कीपर है।

यहाँ श्री पद्मनाभका मन्दिर है। यह मन्दिर त्रावंकोरके महाराजकी निजी सम्पत्ति है, इस कारण यहाँ सुधारकी लहर वहुत ही कम पहुँची है। जातपांत और छुआछूतका वड़ा ख्याल रखा जाता है। सिर्फ धोती पहनकर, नंगे वदन ही अन्दर जा सकते हैं। मन्दिरके चारोंओर ऊंची दालान है जिसमें रोज २ दो हजार ब्राह्मण खिलाये जाते हैं। दालान तथा मण्डपोंमें लकड़ी और पत्थरपर वहुत ही सुन्दर नक्काशीका काम है। यों तो दक्षिण भारतमें सर्वत्र ही अनावृत मूर्त्तियाँ और आकृतियाँ दिखाई देती हैं, किन्तु इस मन्दिरमें वहुतसी आकृतियाँ ऐसी वनी हैं जिनमें स्त्री-पुरुषोंकी जननेन्द्रियाँ वहुत ही प्रमुख वनाकर दिखायी गयी हैं। यह वात अपने रामकी समझमें कुछ कम आयी। अंगोंकी पूर्णता दिखानेके ख्यालसे आवरणहीनता किसी अंशतक शायद ठीक हो, किंतु नग्नताको वढ़ाकर दिखाना क्या अर्थ रखता है, यह समझमें नहीं आया। यही वात हमें कन्याकुमारी और शुचीन्द्रंके मन्दिरोंमें दिखाई पड़ी थी। क्या कोई सज्जन यह वतानेकी कृपा करेंगे कि अध्यात्म विद्याकी दृष्टिसे इसका क्या अर्थ है? क्योंकि कलाकी दृष्टिसे तो निस्सन्देह इसका कोई अर्थ नहीं।

तिरुवनन्तपुरंमें देखनेके योग्य कई स्थान हैं। यहाँकी पशुशाला (जू) और अजायवघर (म्यूजियम) एक वहुत वड़े उद्यानमें स्थित हैं। पशुशालामें वाघोंके टहलनेके लिए एक वहुत वड़ा घेरा वना हुआ है जिसमें जानेके लिए उनके पिंजड़ेसे एक सुरंग गयी है। अजायवघरमें राज्यसे सम्वन्ध रखनेवाली वहुत सी चीजें रखी हुई हैं जिनसे मलयालम देशकी और विशेषतः

त्रावंकोरराज्यकी वहुत सी वातोंका पता चलता है। अतः इसे अवश्य देखना चाहिए। हमें वताया गया कि राजकीय वेधशाला तथा राजप्रासाद भी देखने योग्य हैं; किन्तु समयाभावके कारण हम उन्हें देख नहीं सके। यहाँ चित्रकारी वगैरह सिखानेके लिए भी एक स्कूल है जो दर्शनीय है। वहाँ रविवर्माके पाँच अत्युत्तम चित्रोंकी मूल प्रतियाँ हैं। इनमें शकुन्तलाका पैरमें कांटा गड़ने के वहाने दुष्यन्तको देखनेको ठहरना वहुतही सुन्दर है। हाथी दांतकी कारीगरी हद्द दर्जेतक पहुँची हुई है और इसका वारीकसे वारीक काम वहाँ होता है। इसके नमूने भी स्कूलमें हैं। शहरमें इसकी कितनी ही दूकानें हैं। त्रावंकोरमें लोग मातृपक्षसे ही वारिस होते हैं। राजकुल तकमें इसी नियमका पालन होता है। राजाकी वहन ही रानी कहाती हैं और राजाका भाञ्जा युवराज होता है। सगा न होनेपर गोद लिया जाता है। यहाँ फूलके वर्तन वनते हैं, हर तरहके और अच्छे।

## कन्या कुमारी

तिरुवनन्तपुरंसे कन्याकुमारी ५१ मील है। लॉरीमें जानेका एक रुपया महसूल है। सड़क इतनी अच्छी है कि अपनी यात्रा में इतनी अच्छी सड़क हमें कहीं भी नहीं मिली। इसके लिए राज्य प्रशंसाका पात्र है। सड़कके दोनों ओरका दृश्य इतना सुन्दर और मनोमोहक है कि इसके वाद दूसरी जगहका प्राकृतिक दृश्य तुच्छ मालूम होने लगता है। सड़क भी सांपकी तरह विलकुल टेढ़ी-मेढ़ी गयी है। दोनों ओर छायादार वृक्ष लगे हैं और रास्तेभर ५१ मीलतक दोनों ओर वस्ती है। हमें कहीं भी सूनी सड़क नहीं मिली। सारे रास्ते वैलगाड़ियाँ चल रही थीं किंतु इस ओर सभी लोग सड़क चलनेके नियमों ( ट्रैफिक

रेगुलेशन ) से इतने परिचित हैं कि देखकर आश्चर्य होता था। हम लोगोंकी लॉरीका हार्न सुनते ही सभी वायें दव जाते थे। हमारी लॉरी वरावर ४०–५० मीलकी गतिसे दौड़ती रही पर कभी भी उसे धीमी करनेकी जरूरत नहीं पड़ी। लौटती वेर हम वाजार होकर आये और वरावर ३० मीलकी गतिसे। सड़कके नियमोंसे लोग कितने परिचित हैं इसका पता इसीसे चल सकता है।

कन्याकुमारीमें कन्याकुमारी दुर्गाका मन्दिर है जो छोटा पर साफ-सुथरा है। यहाँ समुद्रमें छोटा-सा घाट वंधा है जिसे मातृ और पितृतीर्थ कहते हैं। यहाँ लाल रंगकी वालू मिलती है जिसे गलाकर 'फिल्म' 'वार्निश' 'मैंटल' वगैरह वनाते हैं। महायुद्धके समय जर्मनोंने इससे वड़ा लाभ उठाया पर अव २० हजार रुपये सालानापर एक अंग्रेज कम्पनीको इसका ठीका दे दिया गया है। कन्याकुमारीके रास्तेमें नागरकोइल नामक ग्राम पड़ता है जहाँ शुचीन्द्रंका वड़ा सुन्दर मन्दिर है। कन्याकुमारीमें स्नानपूजासे निवृत्त होकर हम लोग यहाँ लौटे। यहाँ दत्तात्रेय, शिव और विष्णुकी मूर्तियाँ हैं। हनुमानकी एक ही पत्थरकी वहुत वड़ी मूर्ति है जो दर्शनीय है। यह १५ फीट ऊँची है। यहाँ देवताके जो रथ हैं वे भी वड़े विशाल हैं और लकड़ी पर वहुत सुन्दर काम किया हुआ है। नागर कोइलमें फूलके वर्तनका वहुत वड़ा कारखाना है किन्तु हमें यहाँकी अपेक्षा तिरुवनन्तपुरंमें ही वर्तन सस्ते मिले। यहाँसे लौटकर जव हम तिरुवनन्तपुरं पहुँचे तो शाम हो गयी थी। तिरुवनन्तपुरंकी सुखद स्मृतियाँ हमें सर्वदा वनी रहेंगी। यहाँ हमने जैसा सुन्दर देश देखा वैसा कहीं भी नहीं पाया। यहाँ खादीका प्रचार और हरिजन-आन्दोलन वड़े जोरोंपर देखा।

## श्रीवल्लीपुत्तूर

तिरुवनन्तपुरंसे रात ९॥ बजे चलकर सवेरे ७ बजे हम श्री वल्लीपुत्तूर पहुँचे। वहाँ रंगमदार (विष्णु) का मन्दिर है। यहीं-पर प्रसिद्ध स्त्री अलवार ( भक्त कवि ) अंडालका जन्म हुआ था इन्हें लक्ष्मीका अवतार मानते हैं और इनके विषयमें तरह तरहकी दन्त कथाएं भी कही जाती हैं। थोड़ी ही दूरपर एक छोटीसी पहाड़ीपर श्रीनिवास ( विष्णु ) का मन्दिर है जो छोटे वालाजी कहे जाते हैं।

## चेंगलपट्ट

यहाँसे दिनको ३ बजे चलकर छः बजे सवेरे हम चेंगलपट्ट पहुँचे। यह वहुत पुराना ऐतिहासिक शहर है और पहले विज-यनगरं राज्यके प्रधान नगरोंमें था। यहाँका किला विजयनगर के राजत्व कालमें ही वना था। आजकल इसमें 'रिफार्मेटरी स्कूल, ( कैदी लड़कोंका सुधार शिक्षालय ) है। कई मन्दिर भी हैं। यहाँके तालावमें रंगोंका वड़ा ही सुन्दर प्रदर्शन है। यह स्थान सवको अवश्य देखना चाहिए।

## तिरुकलिकुण्ड्रम्

चेंगलपट्टसे ९ मीलपर तिरुकलिकुण्ड्रम नामक स्थान है जो 'पक्षीतीर्थ' के नामसे अधिक प्रसिद्ध है। एक ऊँची पहाड़ी पर शिवका मंदिर है। वहाँ दो पक्षी ( चील ) ठीक मध्यान्हमें रोज आते हैं और पंडेके हाथसे भोजन करके चले जाते हैं। ये पक्षी पालतू हैं और सामनेकी दूसरी पहाड़ीपर रहते हैं। ह्वांग च्वांग ( हुएनसंग ) की यात्रामें भी इस घटनाका वर्णन मिलता है। इन पक्षियोंका दर्शन वहुत शुभ माना जाता है।

## महाबलीपुरं

यहाँसे और ९ मील आगे महाबलीपुरं नामक गाँव है। यहाँ बहुतसे गुफा मन्दिर और कई पत्थरके बने हुए मन्दिर हैं। यहाँ एक ही पत्थरको काटकर चार छोटे-छोटे मन्दिर बनाये गये हैं जो क्रमशः एक दूसरेसे छोटे हैं। एक चट्टानमें बहुत सी मूर्तियाँ भी बनी हुई हैं जिसे अर्जुनकी तपस्या कहते हैं। एक गुफामें गोदोहन लीलाकी ऐसी भव्य मूर्ति दीवारपर खुदी हुई है कि देखते ही बनता है। यहाँ एक प्रकाशस्तम्भ भी है। समयाभावके कारण हम इसे पूरे तौरपर नहीं देख सके, किन्तु है यह जगह देखने लायक। यात्रियोंको यहाँ एक दिन अवश्य बिताना चाहिए। हम लोग फिर शामको चेंगलपट्ट लौट गये और रातके ग्यारह बजे चलकर घण्टे भरमें कांची (काञ्जीवरम्) पहुँच गये।

## कांची

बचपनमें एक कहानी पढ़ी थी, 'न शेरका डर, न बाघका डर, बड़ा डर टिपटिपवाका'। उस समय तो हमने इसे सिर्फ कहानी हीं समझा था किन्तु कांचीमें आकर मालूम हुआ कि टिपटिपवा भी क्या आफत है। रात हीसे बूंदाबांदी होने लगी जिससे सवेरे उठनेपर कहीं 'बहरी ओर' जाना कठिन हो गया। स्टेशनपर रेलवेकी ओरसे सिर्फ एक छोटी सी घिरी हुई दालान थी जिसपर "मर्दाना" का बिल्ला टंगा था। खैर, राम राम कर उससे छुटकारा पानेपर यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि मंदिर क्योंकर जायें, क्योंकि पानी अब जोरसे बरसने लगा था। किन्तु सबकी भक्तिने जोर मारा और सभी भींगते हुए मन्दिर चले। कांचीमें शिव और विष्णुके भक्तोंमें यहाँतक दंगा हुआ कि

शिवकांची और विष्णुकांची नामक अलग अलग पुरी बस गयी हैं। शिवकांची मंदिरमें घुसते ही वायें हाथ एक मण्डप बना हुआ है जिसके खंभोंपर घुड़सवारोंकी बड़ी सुन्दर मूर्तियाँ खुदी हुई हैं। घोड़ोंकी लगामका सीकड़ इस खूबीसे खोदा है कि मालूम होता है मानों अलगसे लगा दिया गया हो। शिवकांचीमें शिवका पृथ्वीलिंग है। यहाँ आम्र वृक्षके नीचे पार्वती वालूके शिवकी पूजा कर रही थी। उसी समय नदीकी बाढ़ आ गयी। वह जानेसे बचानेके लिए पार्वती शिवसे लिपट गयीं। अतः यह आम्रेश्वर कहाते हैं। यहाँ आमके पेड़के नीचे पार्वतीकी सुन्दर मूर्ति पत्थरपर खुदी हुई है। यहाँ कामाक्षीके मन्दिरके पास शंकराचार्यकी बड़ी भव्य मूर्ति एक मन्दिरमें है। विष्णु कांचीमें विष्णुकी बड़ी मूर्ति है। वामन भगवान ( विराट् रूप ) और कैलाश मंदिर निकट ही हैं और दर्शनीय हैं। शायद कांची पहलेके जमानेमें बहुत बढ़ी चढ़ी रही हो, पर अब तो वह उसकी स्मृति मात्र है। हम दूसरे दिन सवेरे चलकर १० बजे मद्रास पहुँचे।

## मद्रास

"शहर मद्रास देखो", कहकर कितनी ही बार तसवीरवाला हमें मद्रास दिखा चुका है किन्तु मद्रास पहुँचकर देखा कि वह मद्रास दूसरा ही था और यह मद्रास दूसरा ही है। वह मद्रास, जहाँ दुःख नहीं, दैन्य नहीं, शोक नहीं, रोग नहीं, जहाँ हैं केवल ऊँची २ अट्टालिकाएं, और उनमें रहनेवाले नर-नारी जिन्हें कोई चिन्ता नहीं, केवल बचपनके स्वर्ग लोकोंमेंसे एक है। इस संसारमें—जहाँ रोटीके लिए भाई भाईको मार डालता है, जहाँ बेकारीके कारण होनहार नवयुवकोंको आत्महत्या करनी पड़ती

है, जहाँ देशके खिलते हुए फूल उचित और आवश्यक जीवन-रस न पा सकनेके कारण, अधखिली अवस्थामें ही मुरझा जाते हैं, जहाँ जीवन स्वतः एक प्रश्न है—उसका अस्तित्व नहीं रह सकता। यहाँ तो यही मद्रास है।

मद्रास भारतका तीसरा बड़ा शहर है। समुद्रतटपर बसा हुआ ७ मील लंबा और ३ या ४ मील चौड़ा यह शहर अपने ढंगका अकेला ही है। शहरके कुछ दूर पहलेसे ही बिजलीकी गाड़ी शुरू हो जाती है और शहरभरमें कई स्टेशन हैं। एक जगहसे दूसरी जगह जानेके लिए शहरमें ट्राम, बस, घोड़ागाड़ी वगैरह मिलती हैं। पहले हम अड्यार गये। यह मद्रासके दक्षिणी भागमें बसा हुआ है। अड्यारकी प्रसिद्धिका प्रधान कारण है—श्रीमती ( डॉक्टर ) एनी बीसेण्टके द्वारा यहाँ थियोसोफिकल सोसायटीका प्रधान कार्यालय बनाया जाना। थियोसोफिकल सोसायटीने बहुत बड़ा हाता ठीक समुद्रतटपर ले रखा है जिसमें इसकी इमारतें हैं। बहुतसे प्रधान थियोसोफिस्ट लोग यहाँ रहते भी हैं। यह स्थान बड़ा ही रमणीक है। डॉक्टर बीसेण्ट अपने अन्तिम दिनों तक यहीं रहीं। दिन हमलोगोंने यहीं बिताया।

मद्रासमें विशेष दर्शनीय स्थानोंमें मत्स्यागार ('अक्केरियम') है। यहाँ बहुत तरहकी समुद्री मछलियाँ, कछुए वगैरह कांचके बड़े बड़े चौकोर बकसोंमें रखे हैं। इनमें मशीनके द्वारा बराबर पानी पहुँचाया जाता है और लहर पैदा की जाती है। इसके देखनेपर पता चलता है कि कैसी विचित्र विचित्र मछलियाँ भी होती हैं। समुद्री सांप भी हैं जिनके विषयमें कहा जाता है कि वे गेहुँअनसे भी अधिक जहरीले होते हैं। यह बिल्कुल समुद्रतटपर स्थित है। शामको बिजलीकी बत्तियोंमें इन मछलियोंकी शोभा और भी बढ़ जाती है।

मद्रासमें सारा शहर शामको समुद्र तटपर उमड़ पड़ता है। यह समुद्रतट पाँच मील लम्बा है। यहाँके म्युनिसिपल कार्पोरेशनने यहाँ रेडियो-यन्त्र लगा रखे हैं जिनसे गानेकी मधुर ध्वनि निकलकर लोगोंका मनोरंजन करती है। मद्रासमें एक पशुशाला ( जू ) और एक अजायवघर ( म्यूजियम ) भी है। पशुशालामें रूसी भालू है जो हिंदुस्तानमें और कहीं भी नहीं है। सिंह और बाघ तो यहाँ हर तरहके हैं। उनके बच्चे पाले जाते हैं और दूसरी पशुशालाओंमें भेजे जाते हैं। अजायवघर बहुत ही बड़ा और सुन्दर है। ऐतिहासिक और पुरातत्वके विभाग बहुत ही पूर्ण हैं जिनसे दक्षिणके विषयमें बहुतसी बातें मालूम होती हैं। यहींपर "कोनेमारा पुस्तकालय" भी है जो यहाँका सरकारी पुस्तकालय है। उपयोगिता और सौंदर्यका इतना सुन्दर सामंजस्य हमें और कहीं भी दिखाई नहीं पड़ा।

गतवर्ष काशीकी स्वदेशी प्रदर्शनीका उद्घाटन करते हुए श्रद्धेय भगवान्दासजीने कहा था, "प्रदर्शनी प्रत्यक्ष और सच्चा विज्ञापन है। जापानमें तथा पाश्चात्य देशोंमें कहीं कहीं 'एम्पोरियम' ( स्थायी प्रदर्शनी ) हैं। वैसा ही अपने देशमें भी प्रत्येक बड़े शहरमें होना चाहिए।" मुझे यह देखकर हर्ष हुआ कि मद्रासमें ऐसा ही एक 'एम्पोरियम' है। महारानी विक्टोरियाकी स्मृति में लोगोंने वहाँ एक बड़ा सुन्दर भवन बनवाया है। यह 'एम्पोरियम' उसी भवनमें स्थित है और 'विक्टोरिया इन्स्टीच्यूट' कहाता है। यहाँ मद्रास-प्रान्तके विभिन्न भागोंमें बनी हुई सभी तरहकी चीजें ( जैसे कपड़े, खिलौने, बेंतका सामान, हाथीदाँत और सींगकी बनी चीजें ) सजाकर रखी हैं। मूल्य भी उचित रखा है। यह 'म्यूज़ियम' के ही अहातेमें है। इसे अवश्य

देखना चाहिए, क्योंकि एक ही जगह समूचे प्रान्तके शिल्प-कौशलका सामान देखनेको मिल जाता है।

मद्रास स्वाभाविक बन्दरगाह नहीं है। इसलिए समुद्रमें पत्थरकी ऊँची और चौड़ी दीवारोंका एक घेरा बनाकर एक बन्दर बना लिया गया है। यहाँ छोटे छोटे जहाज ही आ पाते हैं। हमलोगोंने एक छोटीसी डोंगीपर चढ़कर समुद्रकी लहरोंका कुछ आनन्द लिया और फिर एक जहाजको देखा।

भारतमें यूरोपियन लोगोंके बहुतसे क्लब ऐसे हैं जहाँ भारतीयोंको घुसनेकी इजाजत नहीं है। इसका एक हलकासा जवाब हमें मदरासमें मिला। यहाँ एक बहुत बड़ा क्लब है जिसमें एक भी यूरोपियन सदस्य नहीं है। क्लबकी अपनी निजी बहुत बड़ी इमारत है जिसमें हर तरहका आराम है। कहा जाता है कि यह हिंदुस्तानका सबसे अच्छे ढंगपर संचालित होनेवाला क्लब है।

हमने हिन्दी-प्रचारका प्रधान कार्यालय भी देखा। हिन्दी-प्रचारवालोंने क्या गजब किया है इसका अनुमान आपको तब लग सकता है जब हम आपसे कहें कि मद्रास जैसे बिल्कुल अहिन्दीभाषी प्रान्तमें आज ७ लाख आदमी हिंदी पढ़, लिख और बोल सकते हैं। धन्य है इनकी लगन। इन्होंने मद्रास प्रांतमें प्रचलित सभी भाषाओंके द्वारा हिंदी पढ़ानेका प्रबंध किया है। इसके लिए इन्होंने अपना अलग प्रेस खोला है जहाँसे ७१ किताबें प्रकाशित की हैं। कार्यालयमें एक बहुत ही अच्छा हिन्दी पुस्तकालय भी है। पिछले वर्ष थोड़ेसे हिन्दी प्रेमी एक 'यात्री-दल' बनाकर उत्तर भारत आए थे। इस बार हम लोगोंका दल देखकर इन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई।

## राजमहेन्द्री

मद्रासले ८॥ बजे रातमें चलकर सवेरे हम राजमहेंद्री पहुँचे। यह गोदावरीके तटपर बसा हुआ बड़ा नगर है। नदी-पर ५६ पायोंका बड़ा भारी पुल है। यहाँ स्नान करनेमें बड़ा आनन्द आया। यहाँ बहुतसे लोग सिर मुड़ाते हैं। हमारे दलकी कुमारी पीताम्बराका भी यहाँ सिर मुड़ाया गया; धार्मिक ख्यालसे कम, स्वास्थ्यके विचारसे अधिक; क्योंकि हालकी बीमारीमें बेचारीके सब बाल ही झड़ गये थे। राजमहेंद्रीसे भी ३ बजे हमलोग चल दिये। यहाँ ठहरनेकी अपेक्षा बेजवाड़ामें विश्राम करना अधिक ठीक होता क्योंकि वहाँ कृष्णाकी सुप्रसिद्ध बांध हम देख पाते। रातके दस बज रहे हैं। विशाखपत्तन निकट आ रहा है। उसके दीप हमें राह दिखा रहे हैं।

## विशाखपत्तन

विशाखपत्तन या "वाइजैग" उत्तर और दक्षिण भारतका सीमाप्रान्त-सा है। पुरी और मद्रासके बीचमें स्थित यह शहर भारतके होनहार बन्दरगाहोंमेंसे है। यों तो विशाखपत्तन बहुत पहलेसे ही तीर्थयात्रियों और स्वास्थ्य-'खोजियों' के लिए महत्त्व-पूर्ण रहा है, किन्तु बंगाल नागपुर रेलवेकी इसे एक बन्दरगाह बनानेकी योजनाके कारण, यह और भी महत्त्वपूर्ण हो उठा है। समानान्तर दौड़ती हुई दो पहाड़ियां ('रिज') समुद्रमें कुछ दूर तक घुसी हुई हैं। इन दोनोंके बीच स्थल भागमें करीब दो मील तक काफी गहरा पानी है जिसमें बड़ेसे बड़े जहाज लंगर डाल सकते हैं। पहाड़ियां इस तरह घूमी हुई-सी हैं कि बाहरवालेको लंगर डाले हुए जहाजोंका पता ही नहीं लग सकता। किन्तु आदमीका काम बहुत आसान नहीं हो

जाय, इसलिए प्रकृतिने इसके मुहानेपर वालूकी दीवार-सी बना रखी है जिस कारण छोटे-छोटे जहाज भी अन्दर नहीं आ सकते थे। इसलिए कम्पनीने ऐसे यन्त्र लगाये हैं जो वालू सोख कर उन्हे धरतीपर फेंकते जाते हैं और वहांपरकी दलदल भूमिको सुखानेमें मदद पहुँचाते हैं। दो पुराने जहाज भी मुहानेपर डुवा दिये गये हैं जिससे वालू अन्दर आकर नदीको भरे नहीं। जेटियां वगैरह वनायी हैं और जहाज अब अन्दरतक चले आते हैं। बड़े बड़े 'क्रेन' भी रेलकी लाइनपर जेटीके किनारे बैठाये हुए हैं। ये एक दफामें ८० मनसे अधिक वोझतक उठा लेते हैं। रेलवे कम्पनीके इस वन्दरगाहको वनवानेका प्रधान उद्देश्य है मध्यप्रान्तका व्यापार खींचना। यह बन्दरगाह इतना बड़ा है कि सारा अंगरेजी बेड़ा इसमें समा सकता है। अगर खुदाने चाहा तो यह बन्दर अपने ढंगका अकेला होगा।

तीर्थयात्रियोंके लिए विशाखपत्तनमें प्रधान आकर्षण है सिंहाचलमके शिखरपर स्थित श्री वराह नृसिंहस्वामीका मन्दिर। यह वाल्टेयर (जो विशाखपत्तनकी छावनी है) स्टेशनसे करीव चार मीलपर है। ऊपरतक जानेके लिए करीव १२ सौ सीढ़ियां हैं। सारे रास्तेमें पहाड़ी झरने हैं जिनमें बड़े सुन्दर-सुन्दर स्थान स्नानार्थियोंके लिए बने हैं। सबसे ऊपरके झरनेमें, जो मन्दिरसे कुछ ही नीचे है, स्नान करनेसे बड़ा आनन्द आता है। रास्तेभर फलदार वृक्ष वगैरह लगे हैं जिस कारण धूपसे जरा भी कष्ट नहीं होता। मंदिरमें नृसिंहजीकी मूर्ति है किन्तु यह चन्दनके लेपनसे इस तरह ढकी रहती है कि बिलकुल शिवलिंग-सी मालूम पड़ती है। दर्शन करनेके लिए एक आना टिकट लगता है। मन्दिर वैष्णवोंके प्रवन्धमें है। मन्दिर पर बहुत ही सुन्दर नक्काशीका काम किया हुआ है जिसमें बहुत

ही वीभत्स अवर्णनीय नंगे चित्र भी खुदे हुए हैं। किन्तु नीचे दस बारह फीटके सिवा सारे मन्दिरपर प्लास्टर चढ़ा हुआ है जिससे नक्काशीका काम छिप-सा गया है। कहीं कहीं जलनेका भी चिह्न है। कहा जाता है कि मुसलमानी आक्रमणसे बचाने के लिए यह इस तरह ढक दिया गया था। यह कहाँतक सच है, नहीं कहा जा सकता।

विशाखपत्तनसे उसी दिन शामको चल कर १०॥ बजे दिन में हम खुरदारोड पहुँचे जहाँसे सीधी लाइन कटक होती हुई कलकत्तेकी ओर चली गयी है और एक शाखा पुरीकी ओर। हममेंसे तीन कटक जानेको यहाँ उतर पड़े और बाकी यात्री-गाड़ीपर पुरी चले गये। तुरत ही गाड़ी बदलकर हम १२ बजे कटक पहुँच गये।

## कटक

कटक उड़ीसाका प्रधान शहर है और राजधानी भी होने-वाला है। यहाँ एक बड़ा 'आर्ट्स' और 'सायंस' कॉलेज तथा एक इञ्जीनियरिंग कॉलेज भी है। इञ्जीनियरिंग कॉलेजके प्रिन्सिपल श्री सोहनलालजी वर्मा हैं। ये हिन्दू विश्वविद्यालयके छात्र थे।

कटक विशेषतः चांदीकी कारीगरीके लिए मशहूर है। चांदीकी जाली और पत्तियोंका काम इतना सुन्दर होता है कि देखकर तबीयत खुश हो जाती है। इत्रदान, फूलदान झुमका, कर्णफूल, वगैरह सभी चीजें इतनी सुन्दर बनती हैं कि मुँहसे बरबस 'वाह' निकल पड़ता है। हमें बताया गया कि चार आनेसे दो रुपये भरी तक बनवाई लगती है। चौदह आने और डेढ़ रुपये भरीका तैयार सामान एक सज्जनने हमारे सामने ही खरीदा। मिट्टीकी छोटी छोटी मूर्तियाँ बनाकर उन्हें बेकार बिजलीके

बलवोंमें बड़ी खूबसूरतीसे भर देते हैं जो मेजपर रखनेके लिए अच्छी होती हैं। यहाँपर भैंसके सींगकी बनी हुई चीजें भी अच्छी मिलती हैं। ये देशी शिल्पप्रोत्साहनके अभावसे अब बहुत ही कम रह गये हैं। क्या इस ओरके धनी इन ग्राम-उद्योगोंको प्रोत्साहित करेंगे!

कटकमें एक बड़ा सुन्दर बांध भी नदीमें बंधा है जिससे चार नहरें निकाली गयी हैं। इनका दृश्य बड़ा ही सुन्दर है और इनमें नावपर सैर करनेमें बड़ा आनन्द आता है। सब देख भालकर शामको ७ बजे चलकर १०॥ बजे पुरीमें हम फिर अपने दलमें मिल गये।

## श्री जगन्नाथपुरी

'श्री जगन्नाथके चरणकमलमें नयन हमारे अटके।'

जगदीशकी 'पुरी' हिन्दुओंके 'चारों धामों' में प्रमुख 'धाम' है। समुद्रपर स्थित यह नगरी न केवल तीर्थयात्रियोंके लिए ही महत्त्वपूर्ण है बल्कि घुमक्कड़ों और स्वास्थ्यखोजियोंके लिए भी बराबर ही महत्त्वपूर्ण है। तीर्थयात्रियोंके लिए पुरीमें सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है जगन्नाथका दर्शन। अतः हमने पहले इसी कामसे छुट्टी लेना ठीक समझा। जब जगन्नाथ नींदसे उठते हैं तबके मंगल दर्शनसे लेकर रातके शयन पर्यन्त जगन्नाथजीके कितने ही दर्शन मिलते हैं। इनमें कुछमें तो सर्वसाधारण मुफ्त जाने पाते हैं, और कुछके लिए उन्हें जगन्नाथकी फीस अदा करनी पड़ती है। धक्कमधक्केसे बचनेके लिए हमने फीस अदा करके दर्शन करना अधिक अच्छा समझा। एक रुपया फी आदमी फीस देकर हम अन्दर घुसे। उस समय भोग लग रहा था।

श्री जगन्नाथजीके विषयमें कई कथाएँ प्रचलित हैं। कोई

कहते हैं कि श्रीकृष्णका शव वहता हुआ इधर आया था और उसीकी नकल वनाकर रखी गयी है। दूसरी कथा है कि वुद्धावतारमें भगवान्‌ने वेद ब्राह्मणकी निन्दा की थी, इसीसे उनके हाथ पैर ठूंठ हो गये, और यह मूर्त्ति उसी अवतारकी है। ऐसा भी कहा जाता है कि स्वयं विष्णु जगन्नाथकी मूर्ति वना रहे थे इस शर्तपर कि उन्हें कोई छेड़ें नहीं। पर लोगोंकी उत्सुकताने उन्हें वीच हीमें छेड़नेको वाध्य किया। अतः विष्णुने भी उसी समय काम करना वन्द कर दिया। इन्हें झूठ या सच समझना अपने अपने मनपर निर्भर है। जगन्नाथके साथ उनके भाई वलभद्र और उनकी वहन सुभद्राकी भी पूजा होती है। दक्षिणके मन्दिरोंके मुकावलेमें तो यह मन्दिर वहुत ही छोटा है। पत्थरोंपर नक्काशीका काम भी वहुत ही थोड़ा है। दीवारों-पर मूर्तियाँ भी वहुत ही थोड़ी हैं। जगन्नाथ, वलभद्र और सुभद्राकी मूर्तियाँ काठकी वनी हुई हैं। हाथ पैर किसीके नहीं हैं। एक सज्जनने अनुमान किया कि ये पहले स्थानीय मल्लाहोंके कुल देवता थे और हिन्दुओंने इन्हें अपना लिया है। मूर्तिके सामने आइना रखकर उसमेंकी छायाको स्नानादि कराते हैं।

पुरी अपनी रथ-यात्राके लिए विशेष रूपसे प्रसिद्ध है। यहाँ हर साल तीन वहुत वड़े रथ वनाए जाते हैं जिनपर तीनों मूर्तियाँ सवार कराके वहाँसे कुछ दूरपर वने हुए एक मन्दिर 'जनकपुर' में ले जायी जाती हैं। वहाँ आठ दिन रहनेके वाद फिर वापस आती हैं। रथयात्राके समय वड़ी भीड़ उमड़ती है। पहले यह विश्वास किया जाता था कि रथके नीचे दव जानेसे स्वर्ग मिलता है। इससे वहुतसे लोग हरसाल अपनी जान देते थे। पर अव पुलिसके प्रवन्धके कारण ऐसा नहीं हो पाता। यहाँ एक 'चन्दन तालाव' है जिसमें यात्री स्नान करते हैं।

# कोणार्क

ऐतिहासिक भवनोंको ओर झुकाव रखनेवाले यात्रियोंके लिए पुरीकी अपेक्षा कोणार्क [ कोनारक ] अधिक महत्त्वपूर्ण है। सूर्यका यह मन्दिर पुरीसे करीब बीस मील उत्तरकी ओर समुद्रके तटपर स्थित है। किन्तु, मोटरका रास्ता ५४ मीलका है जिसमें आधेसे अधिक'कच्चा' है। मोटर मंदिरसे एक मीलपर रुक जाती है। वहाँ से पैदल या बैलगाड़ीपर जाना होता है। हम लोगोंको १२ आदमियोंकी 'बस' आने जानेको ३८ रुपयेमें मिल गयी थी। रास्तेमें दो नदियाँ पड़ती हैं जिनपर बरसातके दिनोंमें कोई पुल नहीं रहता और मोटरकी राह बन्द रहती है। उस समय सिर्फ बैलगाड़ियोंसे ही जा सकते हैं। बैलगाड़ी छ बजे शामको चलकर छ बजे सवेरे पहुँच जाती है और आने जानेको करीब १० रुपयेमें मिल जाती है।

कोणार्क मन्दिरके निर्माण-कालके विषयमें बहुत मतभेद है। कहा जाता है कि यह पहले बौद्ध मठ था और करीब नवीं शताब्दीमें सूर्यका मंदिर बना दिया गया। श्री बिसनसरूप अपनी पुस्तक "कोणार्क" [ बंगाल सरकार-द्वारा प्रकाशित ] में लिखते हैं कि सूर्यकी बड़ी-बड़ी मूर्तियां आकार और ढंगसे बौद्ध हैं, और सातों घोड़े और दोनों हाथोंमें कमल अगर न हों तो बौद्ध देवताओंसे भिन्न न मालूम हों। लक्ष्मीकी मूर्ति भी ठीक ऐसी बनी है जैसी सांचीस्तूपके भाग्य-देवताकी। दूसरा मत यह है कि केशरी वंशके राजाओंने इसे बनवाया और फिर तेरहवीं शताब्दीमें नरसिंह देवने उसे बढ़ाया। कोणार्कका मंदिर रथके आकारमें बना है। इसके चौबीस पहिये बनाये हैं और यह सात घोड़ोंके द्वारा खींचा जा रहा है। मन्दिरके आगे

जगमोहन है और पीछे मन्दिर। मंदिरके ऊपर ऊँचा स्तम्भ था जो अब टूट गया है। जगमोहनके सामने ही नाट्य-मन्दिर है जिसकी छत अब टूट गयी है। किन्तु जितना बचा हुआ है उतनाही यह बतानेके लिए काफी है कि यह कितना सुन्दर रहा होगा। सारा मन्दिर लाल पत्थरोंका बना हुआ है और सूर्य वगैरहकी मूर्तियां सफेद 'क्लोराइट' पत्थरकी हैं। मुश्किलसे आप सारे मन्दिरमें एक इञ्च जगह ऐसी निकाल सकेंगे जिसमें खुदाई न की गयी हो। रथके पहियों तकमें बहुतही सुन्दर खुदाई की गयी है। एक पहियेमें उड़ते हुए कपड़े ऐसे दिखाये गये हैं कि बार-बार देखने पर भी तबीयत नहीं भरती।

गिरनेसे बचानेके लिए जगमोहनमें अन्दरसे बालू भर दिया गया है। मन्दिरमें जानेके लिए ऊपरसे सीढ़ियाँ लगी हैं और सिंहासन रखा है। मूर्ति हटाकर 'म्यूजियम' में रखी है जो पास ही बना है। जगमोहनके ऊपर जानेकी सुविधा है और सभी यात्रियोंको मन्दिर दर्शनका पूरा आनन्द लेनेके लिए ऊपर अवश्य जाना चाहिए एक दूसरा छोटासा मन्दिर मायादेवीके मन्दिरके नामसे पुकारा जाता है। इसमें मूर्तियाँ वगैरह नहीं हैं। दो घोड़े और दो हाथी भी जीवत्प्रमाण बने हैं। केशरी राजाओंका चिह्न 'सिंह' भी सर्वत्र बना हुआ है। 'म्युजियम' में नवग्रहकी मूर्ति बड़ी सुन्दर है। ( दक्षिणमें नौ खड़ी मूर्तियाँ रहती थीं, किन्तु यहाँ और उड़ीसाकी दूसरी जगहोंमें भी सर्वत्र पत्थरकी एक ही पटियापर सब खुदी रहती हैं। राहुका सिर्फ सिर बनाते हैं। ) विष्णु, गंगा वगैरहकी भी मूर्तियाँ बहुत ही सुन्दर हैं।

कहा जाता है कि पहले मन्दिरमें बहुत बड़ा चुम्बक पत्थर रखा था जो जहाजोंको खींच लेता था। किन्तु यह बात झूठ-सी

मालूम होती है। यह मन्दिर भी 'काला पहाड़' * का शिकार बना था। उसी वक्तसे इसकी पूजा वगैरह बन्द हो गयी थी और यह बालूके ढूहोंसे दबा हुआ था। लॉर्ड कर्जनकी बदौलत १९०३ में इसका पुनरुद्धार हुआ है। आईने अकबरीमें इसका पूरा वर्णन है। सारे मन्दिरमें मसाला कहीं भी काममें नहीं लाया गया है और पत्थर एक दूसरेसे लोहेके छड़ों-द्वारा जोड़े गये हैं। लोहेके बड़े बड़े बीम जो पांच टनसे भी अधिक वजनके हैं, काममें लाये गये हैं। यह एक पहेली है कि वे कैसे बनाये गये। पुरातत्त्वके भूतपूर्व डाइरेक्टर जेनरल सर जॉन मारशलने लिखा है—"मेरी समझमें हिन्दुओंकी ऐसी कोई भी इमारत नहीं जो एक साथ ही इतनी बड़ी, इतनी सिजिल की और मनपर इतना स्थायी प्रभाव डालनेवाली हो।" जब फर्ग्युसनने इसकी प्रशंसाके पुल बांध दिये थे उस वक्त उसने सिर्फ इसकी आधी सुन्दरता देखी थी। बहुत ही सुन्दर खुदा हुआ पुश्ता, घोड़े और रथ उन दिनों बालूसे ढके थे और नाट्य मन्दिरका भी कुछ पता नहीं चलता था। कोणार्क समुद्र से बिलकुल काला मालूम होता है। इसलिए अंगरेज नाविक इसे 'काला पैगोडा' के नामसे ही जानते हैं क्योंकि पुरीको वे 'सफेद पैगोडा' कहते हैं।

कोणार्कके यात्रियोंको एक सलाह भी ध्यानमें रखनी चाहिए। इसकी दीवारोंपर खुदी हुई सभी मूर्तियां इस तरहकी हैं जिन्हें आधुनिक युगके लोग गन्दी कहेंगे। किन्तु इसके

---

* मुरशिदाबादके नवाब दाऊदका एक सेनापति जो, बड़ा क्रूर और कट्टर मुसलमान था। इसने बंग देशके बहुतसे देवमंदिर तोड़े थे। यहाँ तक कि एकबार जगन्नाथकी मूर्तिको समुद्रमें फक दिया था। वह पहले ब्राह्मण था। किसी नवाब-कन्याके प्रेममें पागल हुआ था (हि० श० सा०)

बनानेवालोंके मनमें ऐसा कोई भी भाव नहीं था। वे जीवन और जीवनोत्पत्तिको इतना गंदा नहीं समझते थे जितना वर्तमान 'चुप' 'चुप' की नीतिके कारण हम लोग समझते हैं। डॉक्टर ब्लाख लिखते हैं, " 'फोश' और उससे उठनेवाले विचार प्राचीन भारतीयोंको अज्ञात थे। कालिदास वगैरह संस्कृतके लेखकोंकी रचनाओंमें ऐसे वाक्य हैं जिनका अर्थ स्पष्टतः कहना मुश्किल होगा, किन्तु यह सोचनेके लिए जरा भी गुंजाइश नहीं है कि किसीको भी ऐसी रचनाओं या कोणार्ककी यथार्थवादकी मूर्त्तियोंके लिए जरा भी एतराज था। इनके निर्माताओंको दुश्चरित्र कहना अन्याय होगा।" कोणार्क देख कर हम लोग शामको पुरी लौट आये और फिर भुवनेश्वरके लिए रवाना हो गये।

## भुवनेश्वर

यद्यपि 'काला पहाड़' की ध्वंसलीलाके बाद त्रिभुवनेश्वर या भुवनेश्वरका वह महत्त्व तीर्थयात्रियोंके लिए नहीं रह गया है जो था और जो अब भी इसे मिलना चाहिए, फिर भी देश देखनेकी इच्छा रखनेवालोंके लिए इसका महत्त्व बराबर अक्षुण्ण रहा है। ईसाकी पांचवीं सदीके लगभग हिन्दूधर्मके प्रधान केन्द्र काशीपर बौद्धधर्मका बोलबाला हो चुका था। इसी समय उड़ीसामें केशरी वंश राजसिंहासनपर आया। इस वंशके पहले राजाने ही हिन्दूधर्मके पुनरुद्धारकी बात ठानली। फिर तो उड़ीसामें मन्दिर-निर्माणकी वह लहर आयी जो भारत जैसे धर्मप्राण देशके लिए भी नयी थी। उसने अपनी राजधानीके लिए भुवनेश्वरको ही चुना और फलतः यहाँ ७००० मन्दिर बन गये जिनमें ५०० अबतक मौजूद हैं। भुवनेश्वरके मन्दिर

स्टेशनसे करीब दो मीलकी दूरीपर हैं पर रास्ता अच्छा है और बैलगाड़ियाँ सस्ते किराएपर मिलती हैं। सर्वप्रधान मन्दिर त्रिभुवनेश्वर सबसे ऊँचा और लम्बा चौड़ा है सही, किन्तु कलाकी दृष्टिसे भी सर्वोत्तम है, इसमें सन्देह है। उड़ीसाके और मन्दिरोंकी तरह यह भी चार भागोंमें बंटा है। नाट्यमन्दिर, जगमोहन, मीनार और नैवेद्य-गृह। १८० फुट ऊँची, बिना चूने सुर्खीकी बनी मीनार हिन्दुओंकी स्थापत्य कलाकी उत्कृष्टताका नमूना है। पत्थरके टुकड़े एक दूसरे पर लोहेकी कड़ियोंसे बैठाए हुए हैं। सारी मीनार आड़े-खड़े भागोंमें बँटी है जिसमें देखनेवालेका जी नहीं ऊबता। जगह-जगह छोटे-छोटे श्रृंगसे बने हैं और केशरियोंकी विजयका द्योतक 'शार्दूल' सभी जगह बना है। सभी जगह छोटीसे छोटी और बड़ीसे बड़ी मूर्तियाँ इस तरह खुदी हैं कि देखकर दंग रह जाना पड़ता है। लताएँ वगैरह भी इस सुन्दरतासे खुदी हैं कि देखते ही बनता है। उत्तर पश्चिम और दक्षिण ओरकी मूर्तियाँ ग्रीक और रोमनोंकी मूर्तियों से टक्कर लेती हैं, ऐसा कला-विशारदोंका कहना है। लिंगराज त्रिभुवनेश्वरके मन्दिरके सिवा पार्वतीका मन्दिर भी अत्यन्त सुन्दर है। इन मन्दिरोंका हाल ही में जीर्णोद्धार किया गया है। पहले यह विचार था कि जीर्णोद्धारमें मन्दिर ज्योंके त्यों बना दिये जायँ, किन्तु उस ढंगसे करीब दो या तीन वर्गफुटपर काम करके देखा गया कि उन्हींमें करीब १८) खर्च हो गये। तब वह ढंग छोड़ दिया गया और मामूली तौर पर ही काम किया गया। सिर्फ लिंगराजके अहातेमें ही पैंसठ मंदिर हैं। यहाँ अहिंदुओंका प्रवेश निषिद्ध है। इसीसे जब लॉर्ड कर्जनने यहाँ पदार्पण किया था तो मन्दिरकी दीवारसे सटकर एक ऊँचा चबूतरा उनके लिए बनाया गया था जहांसे अन्दरकी

सारी बातें दिखाई देती हैं। लिंगराजके मन्दिरके बाहर ही विंदुसरोवर नामक बहुत बड़ा तालाब है जिसमें भगवानकी चन्दनयात्राका उत्सव होता है। इसके बीच पत्थरका बड़ा भव्य मन्दिर भी बना है। तालाबका पानी बहुत ही गन्दा हो गया है। किनारे पर दो धर्मशालाएँ भी बनी हैं जो अच्छी हैं।

पुरीके जगन्नाथ मन्दिरकी तरह लिंगराजका मन्दिर दूसरे मन्दिरोंकी शोभाको घटाता नहीं, क्योंकि यहाँके हर मन्दिरका ढंग अपना है और सभी दर्शनीय हैं। इनमें मुक्तेश्वर अन्यतम है। प्रसिद्ध कलाविद् फर्ग्युसनने इसे "उड़ीसाके मन्दिरोंमें रत्न" कहा है और यह सच है। इसपर खुदी मूर्तियाँ अपने ढङ्गकी अकेली हैं। 'सिंहवाहिनी' की तो यहाँ ऐसी अच्छी मूर्तियाँ खुदी हैं कि बार बार देखनेपर भी जी नहीं भरता। लताओंके बीच बन्दरों, केकड़ों और मगरोंके खेल भी बहुत सुन्दर रूपसे दिखाये हैं। यहाँ पर भी नटराजकी बहुत सुन्दर मूर्ति है। परशुरामेश्वरका मन्दिर उसके बाद आता है। इसमें विदेशी प्रभावकी झलक स्पष्ट है। जगमोहनकी छत गोल न होकर चौड़ी है और मन्दिर पश्चिमकी तरफ खुलता है। केशरियोंके राजचिह्न शार्दूलका कहीं पता नहीं है और सिंह हिरनका शिकार नहीं करते बरन् स्वयं ही शिकारीके भालोंसे बिंधे दिखाये गये हैं। फिर भी सर्वत्र शिवका अखण्ड राज्य है। पार्वती गणेश और कार्तिकेयके मन्दिर यथा नियम हैं। यहाँकी गणेश मूर्ति विचित्र है।

लगातार बहुत अधिक मन्दिरोंका दर्शन मस्तिष्ककी पाचन क्रियाको बिगाड़ देता है। अतः भुवनेश्वरके मन्दिरोंका पूरा आनन्द उठानेके लिए आवश्यक है कि मन्दिर-दर्शनसे छुट्टी लेकर कुछ भ्रमण भी किया जाय और इसका प्रबन्ध भी वहाँ

है। भुवनेश्वरसे पाँच मीलकी दूरीपर धौली नामक एक गाँव है। वहाँ जानेके लिए वैलगाड़ी ही सबसे उपयुक्त है क्योंकि आगे चलकर रास्ता इतना खराब मिलता है कि सिर्फ वैलगाड़ी ही जा सकती है। कभी समतलपर, कभी पहाड़पर, और कभी नदीमें जाती हुई वैलगाड़ीकी यह यात्रा बड़ी मनोरञ्जक होती है। यहाँ एक चट्टानपर अशोकने अपना धर्मलेख खुदवाया था जो इतिहासके विद्यार्थियोंके लिए महत्त्वपूर्ण है। चट्टानके ऊपरी भागमें एक हाथीकी मूर्ति खुदी हुई है। हाथी वौद्धोंके लिए विशेष पूज्य भी है और इससे लोगोंका ध्यान भी इस ओर आकर्षित होता होगा। पास ही कई पुराने, बिलकुल बेमरम्मत टूटे हुए, मन्दिर भी हैं। एकमें पूजा वगैरह भी होती है। अनुमान किया जाता है कि पासका गाँव तोसाली शायद पहले इस प्रान्तकी राजधानी रहा होगा। अगर यह अनुमान सच हो तो यह धर्मलेख ऐसी जगह है जहाँ तोसालीमें आते जाते प्रत्येक व्यक्तिकी नजर पड़ती होगी। इसे पहले पहल श्री जेम्स प्रिंसेपने पढ़ा था और १८३८ ई० में इसका अनुवाद प्रकाशित किया था।

भुवनेश्वरसे दूसरी ओर तीन मीलपर उदयगिरि और खंड-गिरिकी गुफाएँ हैं। खण्डगिरिमें उन्नीस और उदयगिरिमें चौआलीस गुफाएँ हैं। इनमेंसे अधिक जैन गुफाएँ हैं। खण्ड-गिरिपर करीव तीन सौ वर्ष पुराना जैन-मन्दिर भी है। नीचे एक जैन धर्मशाला भी है। ये गुफाएँ ईसासे तीन सौ वर्षसे भी पहलेकी वतायी जाती हैं। खण्डगिरिकी गुफाएँ संख्यामें कम हैं। इनमें अनन्तगुफा, जो बौद्धोंने खोदी है, बहुत आसानीसे पहचानमें आ जाती है। इसमें बुद्धकी मूर्ति बहुत ही प्रमुखरूपसे दीवारपर खुदी हुई है। लक्ष्मीकी, जिसे

बौद्धोंने 'भाग्यदेवता' के रूपमें अपना लिया है, मूर्ति भी खुदी हुई है। उसकी वगलमें ही सूर्य की मूर्ति खुदी हुई है किन्तु विशेषता यह है कि सात घोड़ोंके बदले चार ही घोड़े खुदे हैं। बाकी सब गुफाएँ जैनोंकी खोदी हुई हैं। इनमें 'सातघर' उल्लेखनीय है। इसकी दीवारोंपर जैन तीर्थङ्करों की मूर्तियाँ बहुत सफाईसे खुदी हुई हैं। हर एक अपने वाहनसे पहचाने जाते हैं। श्री ऋषभदेवकी मूर्ति सबसे अच्छी है। यद्यपि यहाँ २४ तीर्थङ्करोंकी मूर्तियाँ हैं पर वे ऐतिहासिक क्रम-से नहीं हैं। कुछ तो छोड़ दिये गये हैं और कुछ काल्पनिक बना दिये गये हैं। उदयगिरि तथा खण्डगिरिकी सभी गुफाओं-के सामनेकी दालानके दोनों छोरोंपर दीवारमें ताके खुदे हैं जिनमें शायद यहाँके वनवासी अपनी 'छोटीसी गृहस्थी' रखते होंगे। मन्दिरके पास बहुतसे पत्थरके छोटे-छोटे स्तूपसे जमा हैं। यह जगह 'देवसभा' कहाती है। मन्दिरपरसे चारों ओरका दृश्य बहुतही सुन्दर दिखाई देता है।

खण्डगिरिकी अपेक्षा उदयगिरिकी गुफाएं संख्यामें अधिक, वड़ी बड़ी और ऐतिहासिक दृष्टिसे महत्वपूर्ण हैं। इनमें हाथी-गुफा सबसे पुरानी गुफाओंमेंसे है और प्रकृत गुफासी मालूम होती है। इसपर बहुत बड़ा लेख है जिसके अक्षर धौलीके अक्षरसे बहुत मिलते हैं। इससे पता चलता है कि कलिंगाधिपति खरवेलने इन्हें खुदवाया और वहांके जैन संन्यासियोंको बहुत दान दिया। ईसाके १५५ वर्ष पहले उसे राज करते हुए तेरह साल हो गये थे। उसने बहुत देश जीते थे। स्थापत्य कला (इंजीनिय-रिंग) के विचारसे रानीगुफा और गणेशगुफा बहुत मार्केकी हैं।

रानीगुफा दो मंजिला है। नीचे ऊपर छः छः बड़े बड़े कमरे और बड़ा बरामदा है दरवाजोंपर खुदी हुई तसवीरें बहुत

ही सुन्दर और मनोरञ्जक हैं। गणेशगुफामें गणेशकी जो मूर्ति है, उसकी अबतक पूजा होती है। इसपर खुदी हुई मूर्तियां भी बहुत ही मनोरञ्जक हैं। इनका पूरा विवरण 'दि केव टेम्पुस आव इंडिया' में दिया हुआ है। इस पुस्तकमें अजन्ता, इलोरा, मदुरा वगैरहके मन्दिरोंका भी विवरण है। संभव हो तो इसे साथ लाना चाहिए। इस गुफाके दरवाजेपर खुदे हुए सूंड़में कमल लिये हुए हाथी बहुत ही सुन्दर हैं। 'जयविजयगुफा' तथा 'स्वर्गपुरी' बौद्ध गुफाएं हैं। बाघगुफा नामक गुफा बाघके चेहरेके आकारमें खुदी हुई है। इसमें एक ही छोटीसी कोठरी है। इसे अवश्य देखना चाहिए। सर्पगुफा भी दर्शनीय है। इसपर लेख भी खुदा है।

इन्हें देखकर हम फिर भुवनेश्वर लौटे। हमारा गाड़ीवान काल्रूराम बहुत ही होशियार आदमी है। वह रास्तेभर बातें करता और हंसाता आया। जब हम थोड़ी दूर आ चुके तो उसने बैलोंकी नकेल हमारे हाथोंमें दे दी कि तुमने मोटर बहुत चलायी होगी, जरा बैलगाड़ी हांकनेका भी मजा ले लो। लेकिन वाहरे बैल! ऐसे भगे कि भुवनेश्वर आकर ही दम लिया। काल्रूरामने हमें भुवनेश्वरमें पाण्डवगुफा नामक एक स्थान दिखाया जिसका किसी 'गाइड बुक' में जिक्र न था। यह धरतीमें खुदी हुई गुफा है और बहुत ही दर्शनीय है। इसमें किसी ग्रामदेवताकी मूर्ति है जिसकी ये लोग नियमित रूपसे पूजा करते हैं। देखनेसे यह स्थान किसी पुराने किलेका भग्नावशेष मालूम पड़ता है। अब हम फिर मन्दिरोंकी ओर बढ़े।

'राजरानी मन्दिर' यहां एक विशिष्ट स्थान रखता है। खेतोंके बीच स्थित यह मन्दिर अपने ढंगका बेजोड़ है। इसके दरवाजेपर भी नवग्रहकी मूर्तियां खुदी हैं। सारा मन्दिर पत्थर

के ढोंकोंका वना है जो लोहेकी कीलोंसे जुड़े हुए हैं। पत्थर इस खूबीसे वैठाये गये हैं कि जोड़का पता तक नहीं चलता। यहांकी वहुतसी मूर्तियां अविवेकी मूर्ति संग्राहक तोड़कर ले गये हैं, पर जितनी बची हैं, मन्दिरकी कलाका सिक्का जमानेके लिए काफी हैं। अग्निदेवकी मूर्ति बहुत ही अच्छी वन पड़ी है। सबसे सुन्दर मूर्ति एक लड़कीकी है जिसकी मुस्कान एक कलाविद्के कथनानुसार, 'सुप्रसिद्ध 'मोना लिसा'*की मुस्कानसे किसी तरह भी कम नहीं है।' तुरत ही सव कुछ देख डालनेकी इच्छा रखनेवालोंको यह कहती हुई सी जान पड़ती है—

'गरीबखानेमें लिल्लाह दो घड़ी बैठो,
बहुत दिनों पै तुम आये हो इस गलीकी तरफ।
जरा सी देर ही हो जायगी तो क्या होगा,
घड़ी घड़ी न उठाओ नजर घड़ीकी तरफ।'

सचमुच अपने अतीत गौरवकी इन निशानियोंको देखनेमें जरा भी जल्दी नहीं करनी चाहिए।

दूसरे महत्त्वपूर्ण मन्दिर ब्रह्मेश्वर और मेघेश्वर हैं। किंवदन्ती है कि इन्हें विश्वकर्माने ब्रह्माके आज्ञानुसार वनाया था। इनपर सर्वत्र शार्दूल बने हैं जो केशरी राजाओंकी विजयके प्रतीक हैं। मेघेश्वर सबसे नया है सही, किन्तु कलाकी दृष्टिसे किसीसे भी पिछड़ा हुआ नहीं है। यहाँ भी जानवरोंकी वड़ी

---

*—'मोनालिसा' 'लियानार्डो द विन्सी' की अंकित की हुई मुस्कराती हुई एक बालाकी तसवीर है जो पेरिसके सुप्रसिद्ध चित्रालय लूव्रकी जान समझी जाती है। यह रैफेलका समकालीन था और आधुनिक चित्रकारीके आरम्भक कर्त्ताओंमें था। यह मूर्तिकार भी था। किन्तु दुनियाँ इसे इसके चित्रोंसे ही जानती है। कहते हैं कि इस तसवीरके बनानेमें इसे चार साल लगे थे और फिर भी यह अपूर्ण ही रही।

सुन्दर तसवीरें खुदी हुई हैं। इन मन्दिरोंके सिवा भुवनेश्वरके और भी बहुतसे मन्दिर दर्शनीय हैं और सभीको इन्हें देखनेके लिए समय देना चाहिए। गुफाएँ भी बार बार देखनेकी चीजें हैं।

लौटते लौटते शाम हो गयी थी। हमारी बैलगाड़ी धीरे धीरे खेतों और नालोंसे जा रही थी। काल्रूराम मस्त होकर अपनी ग्रामीण भाषामें गा रहा था। कुछ दूरपर थोड़ेसे झोपड़े खड़े थे। अचानक पीछेसे किसीने पुकारा। काल्रूरामने भी उत्तर देकर गाड़ी रोकली। हमारे पूछनेपर उसने कहा 'ठहरो'। तुरत ही एक स्त्रीने आकर एक बच्चा काल्रूरामकी गोदमें दे दिया। काल्रूरामने जी भरकर उसे प्यार किया, फिर एकबार अपनी प्रियतमाकी ओर ताका और फिर बच्चेको चूमकर वापस करते हुए शीघ्र लौटनेकी प्रतिज्ञा कर गाड़ी आगे बढ़ा ली। घण्टे भर बाद अपने बिछुड़ोंसे मिलनेके लिये हम भी अपने घरोंकी ओर आ रहे थे।

---

# परिशिष्ट—( क )

गत दिसम्बर और जनवरी मासमें हम पांच छ मित्रों और सम्बन्धियोंने अपने कुटुम्बके साथ दक्षिण भारतकी यात्रा की थी। इसका विवरण आपके सामने है। कार्यक्रम तैयार करने और यात्राका प्रबन्धका काम मेरे सुपुर्द किया गया था और सब मित्रोंकी आज्ञा है कि रेलके-प्रबन्ध, यात्राके व्यय, आदिके संबंधमें कुछ बातें भी इस विवरणके अंतमें दे दी जायँ। इसी आज्ञाका मैं पालन कर रहा हूं।

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है, हम लोगोंने ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला रेलवे [ बड़ी लाइन ] और साउथ

इण्डियन रेलवे [ छोटी लाइन ] की थर्ड क्लास टूरिस्ट कार [ गाड़ी ] में यात्रा की थी। जी० आइ० पी० की गाड़ीके लिए पब्लिसिटी अफसर, जी० आइ० पी० रेलवे, बम्बईको और साउथ इंडियन रेलवेकी गाड़ीके लिए चीफ ट्रान्सपोर्टेशन सुपरिण्टेण्डेण्ट, साउथ इण्डियन रेलवे, त्रिचनापलीको लिखना होता है। पहले दर्जेकी टूरिस्ट गाड़ी तो सभी रेलवेकी हैं परन्तु इस ओर यात्रा करनेके लिए तीसरे दर्जेकी टूरिस्ट गाड़ी उपर्युक्त रेलवेके अतिरिक्त केवल ईस्ट इण्डियन रेलवेके पास है। टूरिस्ट गाड़ीमें यात्रा करनेसे अनेक प्रकारका सुख मिलता है। गाड़ीमें प्रत्येक आदमीके सोनेके लिए पूरा स्थान है। गाड़ीमें ही रसोईघर और नहानेकी कोठरियां बनी हैं जिससे चलती गाड़ीमें भोजन पक सकता है और स्नान कर सकते हैं। अपना सीधा, सामान, बर्त्तन, रसोईदार साथ ले चलनेसे हर स्थानमें, अपने पसन्दका, स्वच्छ भोजन नियमित समयपर सुविधापूर्वक बहुत साधारण व्ययमें बराबर तयार मिलता है। जी० आइ० पी० और साउथ इंडियन रेलवेकी गाड़ियोंमें बिजलीके पंखे भी लगे हैं। गाड़ी चाहे जब, आधी रात, पिछली पहर, स्टेशनसे रवाना हो, एक रेलसे दूसरी रेलमें कटकर लगे, अथवा दूसरे स्टेशनपर पहुंचे, किसी समय चढ़ने उतरने अथवा सामान उतारनेका कष्ट नहीं उठाना पड़ता। अपने समयसे सो सकते हैं और अपने समयसे उठ सकते हैं। गाड़ीमें ही रहने, उसको अपना चलता फिरता घर बना लेनेसे न होटलों, धर्मशालाओंकी खोजमें भटकना पड़ता है न बार-बार स्टेशनसे सामान ढोनेमें कुली और गाड़ीका खर्च उठाना पड़ता है। स्टेशनोंपर प्रायः पेड़के नीचे भोजन बनानेके लिए स्थान मिल जाता है और रेलके अधिकारी लोग पानी और

मेहतर आदिका भी प्रबन्ध कर देते हैं। आवश्यक यह होता है कि पूरी यात्राका क्रम ( प्रोग्राम ) पहिलेसे विचारपूर्वक बनाकर भेज देना पड़ता है और उसीके अनुसार टूरिस्ट गाड़ी चलती और ठहरती है; यद्यपि स्टेशन मास्टरको समयसे सूचना देनेसे वे तार द्वारा स्वीकृति मंगाकर प्रोग्राममें छोटा मोटा परिवर्तन भी प्रायः कर देते हैं।

तीसरे दर्जेकी टूरिस्ट गाड़ीका किराया यद्यपि साधारण तीसरे दर्जेके किरायेसे अधिक होता है परन्तु स्टेशनोंपर सामान ढोनेके लिए कुली और गाड़ी खर्चकी बचतका विचार किया जाय तो विशेष सुविधाओंके होते हुए भी किराया विशेष नहीं मालूम होगा। जी० आइ० पी० और ई० आइ० रेलवेकी टूरिस्ट गाड़ियोंमें ३८ आदमियोंके लिए तथा साउथ इण्डियन रेलवेकी टूरिस्ट गाड़ीमें २८ आदमियोंके लिए सोनेका स्थान है। जी० आइ० पी० टूरिस्ट गाड़ीका किराया है ३८ आदमियोंके लिये बारह आना प्रति मील अथवा ३८ आदमियों के तीसरे दर्जेका किराया जो अधिक हो और इसके अतिरिक्त पांच रुपया प्रति दिन चाहे गाड़ी चलती हो अथवा ठहरी हो। ई० आइ० आर० की टूरिस्ट गाड़ीका किराया है ३८ आदमियोंके लिए अपनी लाइनपर आठ आना प्रति मील। अन्य रेलवेपर बारह आने प्रति मील अथवा ३८ आदमियोंका तीसरे दर्जेका किराया जो अधिक हो और इसके अतिरिक्त दस रुपया प्रति दिन। साउथ इण्डियन रेलवेकी टूरिस्ट गाड़ीका किराया है बारह आना प्रति मील अथवा जितने आदमी गाड़ीमें सफर करें उनका तीसरे दर्जेका किराया जो अधिक हो और इसके अतिरिक्त दस रुपया रोज। हम लोगोंने ४४ दिनमें रेलसे ४६९१ मीलकी यात्रा की, ३५ स्थान देखे और इसके लिये ३९९५।=)॥

रेलभाड़ामें खर्च हुआ। हम लोग बड़े, छोटे, बच्चे मिलाकर कुल ३५ प्राणी थे, परन्तु रेलभाड़ाके विचारसे केवल ३० टिकट होता था। सुविधाके खयालसे और इसलिए कि सारा दल एकही कुटुम्बके समान रहे हम लोगोंने और अधिक आदमियों-को साथ नहीं लिया; परन्तु ३८ पूरे टिकटवाले आदमियोंतक इतनेही रेलभाड़ामें उक्त यात्रा कर सकते हैं। अवश्य ही छोटी लाइनकी गाड़ीमें कुछ स्थानाभावका कष्ट उठाना होगा। इन टूरिस्ट गाड़ियोंके सम्बन्धमें एक बात लिखनी रह गयी कि बड़ी लाइनकी गाड़ीमें २५ मन और छोटी लाइनकी गाड़ीमें ३५ मन सामान वगैरह विना महसूलके ले जा सकते हैं।

रेलभाड़ाके अतिरिक्त हम लोगोंका शामिल खर्च ४६८।।।)। लारी, गाड़ी, कुलीमें, ५२४।=)। भोजनमें, २४१) पूजा और दक्षिणा में तथा ३४।।≡)।।। इनाम तथा फुटकरमें हुआ। यात्राका कुल शामिल खर्च ५२६४।)।।। हुआ। ३० टिकटमें दो रसोईदार और दो नौकर रसोईके कामके लिए थे। इस प्रकार अगर कुल व्यय २६ व्यक्तियोंमें बाँटा जाय तो शामिल खर्च व्यक्ति पीछे २०२≡)७ पड़ा। इसके अतिरिक्त लोगोंने स्थान स्थानमें सौगातके लिए वस्तुएँ खरीदीं और भक्तजनोंने विशेष पूजन और अर्चन भी कराया जो व्यय तीन हजारसे ऊपर होगा परन्तु यह अपनी इच्छापर निर्भर है।

यात्राके कार्यक्रमके विषयमें एक बात लिख देना आवश्यक है कि जितना समय इस यात्रामें लगा उससे अधिक समय लगाना वर्त्तमान अवसरपर हम लोगोंके लिए सम्भव नहीं था अन्यथा थोड़े अधिक व्ययसे बम्बई, पूना, नासिक भी देखा जा सकता था। बम्बईसे केवल १६२ मीलपर मनमाडसे हम लोग क्षणकी ओर घूम गये। मैसूर राज्य, जो देखने योग्य है,

तथा हैदराबाद रियासत भी समयाभावके कारण, हम लोगोंको छोड़ देना पड़ा। इन रियासतोंको सरहद्दपरसे ही हम लोगोंका मार्ग था। रेलकी यात्रा हम लोगोंने प्रायः रात्रिमें सोते हुए की जिसमें दिनका समय दर्शन करने, मन्दिरों तथा नगरोंको देखने के लिए खाली मिल जाय। पीछे मालूम हुआ कि रेलमें जाते हुए पूर्वी घाटका दृश्य बहुत ही सुन्दर और देखने योग्य है। रेलका मार्ग बड़े-बड़े सुरंगोंमेंसे होकर उतार चढ़ावपरसे बना है। सम्भव हो तो मद्रासमे रामेश्वर तककी यात्रा दिनमें करनी चाहिए।

अन्तमें सबसे आवश्यक बात लिखकर मैं इस वक्तव्यको समाप्त करता हूँ। यात्राका सारा आनन्द साथियोंपर निर्भर करता है। यदि साथी लोग प्रसन्न मन और एक दूसरेकी सहायता करनेको तत्पर रहते हैं तो जङ्गलमें भी मङ्गल मनाया जा सकता है और कठिनाई झेलनेमें भी अनुभवका लाभ होता है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि एक प्रकार और विचारके लोग परस्पर प्रेम और सहायताके भावसे ही साथमें यात्रा करें। ईश्वरके अनुग्रहसे हम लोगोंके सब साथी इसी प्रकारके थे और प्रत्येक व्यक्ति प्रेमसे एक दूसरेकी सहायता करनेके लिए सदा तैयार रहता था। मुख्यतः यही कारण है कि यात्राकी समाप्तिपर एक दूसरेसे बिछुड़नेमें सभी लोगोंको बहुत कष्ट हुआ और सब लोगोंने एक स्वरसे कहा कि इस डेढ़ मासमें जीवनकी सबसे आनन्दमय घड़ियाँ बीतीं।

—श्री बलदेवदास

---

# परिशिष्ट—( ख )

भुवनेश्वरसे हम कलकत्ते आये। कलकत्तेमें हमलोग केवल दो रोज ठहरे। कालीजी का दर्शन किया, चिड़ियाखाना, अजायव घर वगैरह देखा और वाजारमें कुछ खरीद की। दूसरे दिन शामको वम्बई-मेलसे रवाना होकर गत २० जनवरी, १९३५ को हम काशी पहुँच गये। हम लोगोंके आनेकी सूचना सवको मिल गई थी, जिससे वहुतसे स्नेही-सम्वन्धी स्टेशन पर आये थे। इतने दिनोंके वाद मिलनेके कारण देर तक लोग एक दूसरे से मिलते रहे और फिर अपने अपने घर गये। उस दिन शामको श्री चन्द्रभालने अपने घर पर सभी यात्रियोंको एक प्रीतिभोज दिया जिसमें वड़ा मजा आया।

हमने इस यात्रामें हर तरहके मन्दिर देखे। बड़े बड़े शहरों और छोटे छोटे गाँवों तकमें जाकर मन्दिर दर्शन किया। हमारा विचार है कि इस तरह अन्धाधुन्ध मन्दिर दर्शनसे पुण्य-सञ्चय भले ही होता हो, पर देश दर्शनकी इच्छा रखनेवालेके लिए यह सिर्फ समय और शक्तिका अपव्यय है। रामेश्वर, पद्मनाभ ( तिरुवनन्तपुरं ), श्रीरंगं, त्रिचनापल्लीका 'रॉक टेम्पुल', तंजोर, और चिदम्वरम्के मन्दिरोंके देख लेनेके वादके दक्षिणके मदिरोंमें कोई विशेषता नहीं मालूम होती। मदुरामें मीनाक्षी का मन्दिर सव के अंतमें देखनेकी चीज है क्योंकि वहाँ कला अपनी चरम सीमा पर है। उसे देखनेके वाद फिर और मन्दिर जरा कम जंचते हैं। पर इससे यह मतलव नहीं समझना चाहिए कि अन्य स्थान दर्शनीय नहीं है। वालाजीकी सीढ़ियाँ, तिरुस्कन्दूरका समुद्री-घाट, कांचीकी घुड़सवार मूर्तियाँ सभी अपने ढंगकी अकेली चीजें हैं। अतः सभी जगह जाना चाहिए, सभी मन्दिरोंमें नहीं जाना

चाहिए क्योंकि इस तरह बेहिसाब मन्दिर देखनेसे उनकी विशेषताएं भी याद नहीं रहतीं। मैंने यह बात सिर्फ पर्यटकके दृष्टि-कोणसे लिखी हैं। श्रद्धालु तीर्थ-यात्री क्षमा करें।

## कृतज्ञता-ज्ञापन

हमारी यात्रा जिस सफलताके साथ समाप्त हुई उसके लिए हम श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्यजीके परम कृतज्ञ हैं। आपने हमलोगोंके कार्यक्रमके अनुसार सभी जगहोंके स्थानीय कांग्रेस जनोंको हमारे पहुँचनेकी सूचना पहलेसे दे दी थी। इससे जहाँ भी हम जाते थे, कांग्रेसके लोग हमारी बड़ी मदद करते थे। दक्षिणीभाषाओंको न जाननेके कारण हमें कभी तकलीफ नहीं हुई। कांग्रेसका यह संघटन देखकर ही हम उसकी यथार्थ शक्ति और व्यापकताका अनुमान कर सके। हम उन सभी सज्जनोंके प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं जिनकी सहायताके कारण हमारी यात्रा इतनी सफल हुई। हम सब अकबर हैदरीके भी कृतज्ञ हैं। उनकी मददसे इलोराकी गुफाएँ बहुत ही अच्छी तरह देख सके।

अपनी मातृभाषा कितनी मधुर होती है, इसका पता आपको तभी लगेगा जब आप किसी ऐसी जगहमें हों, जहाँ कोई उसे समझने या बोलनेवाला न हो। दक्षिणमें ही हमें हिन्दीकी मधुरताका अनुभव हुआ। किन्तु हम यह देखकर दंग रह गये कि वहाँ हिन्दीप्रचारवालोंने गाँवमें गाँवमें अपने प्रचारक भेज रखे हैं जो बहुत ही प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। हम जहाँ भी गये हमें इन प्रचारकोंसे बड़ी मदद मिली। मद्रासमें तो हिन्दी प्रचारके मन्त्री श्री सत्यनारायण जीने हमारी बड़ीही मदद की। हम उन सबके अति कृतज्ञ हैं।

हम रेलके कर्मचारियों, छोटे और बड़े सबको, धन्यवाद देना नहीं भूल सकते, जिनके सहयोग विना हमारी यात्रा कष्टकर हो जाती। सभी चीजोंकी तरह इनके भी दो रूख होते हैं। साधारण मुसाफिरोंके प्रति इनका जो व्यवहार रहता है, यात्रियों ('टूरिस्ट') के प्रति इनका व्यवहार उससे विलकुल उल्टा रहता है। वे हम लोगोंके आरामकी बड़ी फिकर रखते थे।

मैं अपनी ओरसे तथा सभी सहयोगियोंकी ओरसे यात्राके संयोजक श्री बलदेव दासजीके प्रति, कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। हमारी यात्राका ऐसा सुन्दर प्रोग्राम बनाने और सारी यात्राको ऐसे सुचारु रूपसे चलानेका सारा श्रेय आपको है।

हम श्री कान्तिलाल गांधी तथा तिरुवनन्तपुरं (त्रिवेन्द्रम) के हरिजन संघके कार्यकर्ताओंके कृतज्ञ हैं। हम कुम्भकोणंके डॉ० एम० के० साम्बशिवं तथा उनके भाईके प्रति भी जो तिरुवनन्तपुरंमें मैजिस्ट्रेट हैं, अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं। इन सबसे हमें अपनी यात्रामें बड़ी मदद मिली।

## सहायक पुस्तकें

यात्रियोंकी सुविधाके लिए भारतके प्रायः सभी दर्शनीय स्थानोंकी छोटी छोटी सचित्र पुस्तिकाएं प्रकाशित की गयी हैं। इनमें उस स्थानकी सभी दर्शनीय इमारतों वगैरहके इतिहास, वर्णन, वहाँ जानेका तरीका इत्यादि दिया रहता है। हमें भी ऐसी पुस्तिकाओंसे बड़ी मदद मिली। ये पुस्तिकाएँ, पब्लिसिटी ऑफिसर, इण्डिया स्टेट रेलवेज, २६ अलीपुर रोड, दिल्लीसे मुफ्तमें मिलती हैं। यात्राके विषयमें और भी सब तरहकी जानकारी इनसे मिल सकती है।

बहुत वर्ष पहले श्री साधुशरण प्रसादने सारे भारतका

भ्रमण कर,—इसमें उन्हें ३५ वर्ष लगे थे—स्वयं देख सुनकर तथा गैजेटीयरोंकी मददसे 'भारतभ्रमण' नामक पुस्तक लिखी थी। प्रचारके लिए केवल लागत मूल्यपर ही उन्होंने इसे प्रकाशित भी किया था। यह पुस्तक सभी छोटे बड़े स्थानोंका इतना विशद वर्णन देती है कि यात्रीको कुछ जानना बाकी नहीं रहता। खेद है कि रचयिताके देहावसानके बादसे यह अप्राप्य हो गयी है। इसका संशोधित संस्करण प्रकाशित करनेकी ओर प्रकाशकोंको ध्यान देना चाहिए। हिन्दीमें ऐसी किताबकी कमी बहुत ही खटकती है। सभी तीर्थोंका इसमें तीर्थयात्रीकी दृष्टिकोणसे बहुत सुन्दर वर्णन है। अंगरेजीमें श्री मरे लिखित एक पुस्तक है। जिसमें सभी स्थानोंका वर्णन बहुत सुंदर दिया हुआ है। हमें इन दोनों पुस्तकोंसे अपनी यात्रा भर बड़ी मदद मिली।

## कुछ इधर उधरकी

दक्षिणके लोगोंका प्रधान खाद्य चावल होनेके कारण सभी मन्दिरोंमें इसीका भोग लगता है। सभी इस 'महाप्रसाद' को विना किसी भेदभावके ग्रहण करते हैं। फिर भी वहाँ छुआछूतका इतना प्रचार देखकर आचार्योंको 'हरिको भजे सो हरिका होई' की शिक्षा निरर्थक जाती हुई-सी मालूम पड़ती है। हिन्दुओंसे तो जूते मन्दिरसे आधीमील दूर उसके गोपुरम ( सदर दरवाजे ) पर ही उतरवा लिये जाते हैं, किन्तु अंगरेज़ जूते पहने हुए भी मन्दिरके बिलकुल दरवाजे तक चले जाते हैं। यह ढोंग और भेदभाव हमारी समझमें नहीं आया। धर्ममें भी यह घोर पक्षपात शायद वर्तमान भारतके अनुरूप ही है।

मूर्त्तियों और दीवारोंपर बनी तसवीरों या खुदी मूर्त्तियोंकी सुन्दरताके विषयमें कुछ कहना निरर्थक होगा। दक्षिणमें सर्वत्र

ही हमने हिन्दू मूर्त्तिकला और स्थापत्यकलाका चरम उत्कर्ष देखा। कहीं कहीं पुनरुद्धार किया गया है किन्तु अभी बहुत कुछ बाकी है। प्राचीन शिल्पियोंने प्रकृतिको कभी बुरा नहीं माना। इससे अक्सर अनावृत मूर्तियाँ बनी हैं। किन्तु कहीं कहीं मूर्तियोंको उनके पुजारियोंने कपड़े पहनानेका जो हास्यास्पद यत्न किया है, उससे वे और भी भद्दी हो गयी हैं। कहीं कहीं रंगसे भी उनकी सुन्दरता असुन्दर बना दी गई है।

यात्री-गाड़ीके कारण कहीं भी हमें होटलोंमें ठहरनेकी जरूरत तो नहीं हुई, पर अनुभवके लिए हमने खाना वहाँका अक्सर खाया। जहाँतक हमने देखा, होटलोंको बहुत ही साफ और सस्ता पाया। भोजनमें मिर्चकी मात्राकी जो अधिकता सुनता था, वह भी अत्युक्ति है। इधर कॉफीका बहुत अधिक प्रचार है। घोड़े गाड़ीकी अपेक्षा बैलगाड़ी ही हमें प्रायः सभी जगह मिली। इधरके बैल बहुत तेज चलते हैं। काशीके पण्डोंकी तरह इधरके पण्डे यात्रियोंको परेशान नहीं करते, बल्कि बड़ी भद्रतासे पेश आते हैं। वे हिन्दी समझ बोल लेते हैं।

"एक एक मन्दिरकी, **विशेषकर दक्षिणमें,** इतनी आमदनी और इतनी इमारत है कि सहजमें एक एक युनिवर्सिटी, विश्वविद्यालय और कलागृह और चिकित्सालयका काम उनसे चल सकता है। यदि सब वक्फकी जायदादोंका, और सब धर्मत्र देवत्र संस्थाओं और "अखाड़ों" (यथा "निर्वानी", "निरंजनी", "जूना" "पंचायती" आदि) और मन्दिरोंका प्रबन्ध सद्बुद्धिसे हो, और उनके अधिकारी सदाचारी और लोक-हितैषी हों, और स्वयं पढ़ने पढ़ाने आदिके काममें, और रोगियोंकी चिकित्सामें लग जायं, तो इनकी आमदनी और मकानातसे आज पचास युनिवर्सिटी और पाँच सौ कारीगरी और

हुनर सिखानेके कॉलेज और प्रत्येक गांवमें एक स्कूल अर्थात् समग्र भारतमें सात लाख स्कूल, और हर बड़े शहरमें एक चिकित्सालय, आयुर्वेदके अनुसार, काम कर सकते हैं, और इतने सदाचारका समस्त जनतापर, शासकपर और शासितपर, राजापर और प्रजापर, कैसा कल्याणकारक प्रभाव पड़ेगा, यह सहजमें समझा जा सकता है।"

—श्रद्धेय श्री भगवान्दास।

---



मुद्रक—माधव विष्णु पराड़कर, ज्ञानमण्डल यन्त्रालय, काशी।

